२३

सत्यासत्य-विवेक
शास्त्रार्थ-बरेली

ग्रन्थ परिचय

सत्यासत्य विवेक (लिखित)

प्रतिपक्षी शास्त्रार्थ : पादरी टी.जी. स्काट

स्थान : बरेली, राजकीय पुस्तकालय

समय : संवत् १९३६, भादों सुदी ७-९ (२५-२७ अगस्त, सन् १८७९)

विषय : **पहले दिन**— आवागमन

दूसरे दिन— ईश्वर कभी देह धारण करता है या नहीं ?

तीसरे दिन—ईश्वर अपराध क्षमा करता है या नहीं ?

पुस्तक का नाम : सत्यासत्य विवेक

प्रकाशन : प्रथम संस्करण

१. आर्यभूषण प्रेस, शाहजहाँपुर (मूल्य चार आना) उर्दू भाषा में, सितम्बर १८७९।

२. श्रीमद्दयानन्द ग्रन्थ संग्रह में, आर्यभाषा में, श्री जगत्कुमार शास्त्री द्वारा।

३. गोविन्दराम हासानन्द द्वारा पृथक् पुस्तक के आकार में।

४. 'दयानन्द शास्त्रार्थ संग्रह।'

५. 'ऋषि दयानन्द के शास्त्रार्थ और प्रवचन' (संवत् २०३९)।

सत्यासत्य-विवेक-शास्त्रार्थ-बरेली

स्वामी दयानन्दजी का एक महत्त्वपूर्ण शास्त्रार्थ बरेली के पादरी टी०जी०स्काट के साथ भाद्रपद शुक्ला ७,८,९ सं० १९३६ तदनुसार २५,२६,२७ अगस्त सन् १८७९ ई० को हुआ।

प्रथम दिन—आवागमन विषय।

द्वितीय दिन—क्या ईश्वर देह धारण करता है, वा नहीं ?

तृतीय दिन—ईश्वर अपराध क्षमा करता है, वा नहीं ?

बरेली के लाला लक्ष्मीनारायण खजान्ची शास्त्रार्थ-सभा के सध्यस्थ थे। शास्त्रार्थ लिखित हुआ, तथा तीन लेखकों ने क्रमश: स्वामीजी, पादरी साहब, तथा सभापति की ओर बैठकर सम्पूर्ण शास्त्रार्थ को अक्षरक्ष: लेख-बद्ध किया। इस प्रकार तीन प्रतियां तैयार हुई, एक-एक प्रति स्वामीजी, पादरी महाशय और तथा सभापति के पास रहीं।

पं० लेखरामकृत स्वामीजी के जीवनचरित के अनुसार—''स्वामीजी तथा पादरी महाशय की दस्तखती असली तहरीर की अक्षरश: प्रतिलिपि छपाई जाती है। पाठक अपनी बुद्धि से विचार कर अन्तिम निर्णय निकाल लें''

'सत्यासत्य-विवेक' के विभिन्न संस्करण—यह शास्त्रार्थ असली लिखित प्रति के अनुसार 'सत्यासत्य-विवेक' के नाम से उर्दू में 'आर्यभूषण प्रेस' शाहजहांपुर से प्रकाशित हुआ। इस प्रथम संस्करण का प्रकाशन-काल सितम्बर १८७९ ई० था। द्वितीय वार यह पुस्तक 'आर्यदर्पण प्रेस' शाहजहांपुर से छपी। चतुर्थ और पंचम वार उर्दू जीवन चरित में संगृहीत किया था। वहाँ से लेकर पं० जगत्कुमार शास्त्री ने स्वसम्पादित ''श्रीमद्दयानन्द ग्रन्थ-संग्रह'' में स्थान दिया। गोविन्दराम हासानन्द के द्वारा यह पृथक् पुस्तकाकार भी छपा था। 'सत्यासत्य-विवेक' का विज्ञापन ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के आश्विन सं० १९३६ के ११ वें अंक में छपा था। विज्ञापन इस प्रकार था—

सत्यासत्य-विवेक (विज्ञापन)

'इस पुस्तक में सविस्तर वृत्तान्त तीनों दिन के शास्त्रार्थ का, कि जो स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और पादरी टी०जी०स्काट साहब का राजकीय पुस्तकालय बरेली[1] में, इस प्रकार कि प्रथम दिन अनेक जन्म के विषय में, दूसरे दिन अवतार अर्थात् ईश्वर देह धारण कर सकता है, इस विषय में और तीसरे दिन 'ईश्वर पाप क्षमा करता है वा नहीं, इस विषय में हुआ था। बहुत उत्तम फारसी लिपि और उर्दू भाषा में मुद्रित हुआ था। इस शास्त्रार्थ में प्रत्येक विषय पर उत्तम प्रकार से खण्डन मण्डन हुआ है, कि जिसके देखने से सत्यप्रेमी जनों को सत्य और असत्य प्रकट होता है। जो विद्यार्थी मिशन स्कूलों में पढ़ते हैं और बहुत करके गुमराह होते हैं, उनको यह पुस्तक गुमराही से बचाती है। डाक महसूल सहित।) ॥ मूल्य भेज कर मंगवावें।'

'दयानन्द-दिग्विजयार्क' खण्ड १ मयूख ६ में भी इस शास्त्रार्थ का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। श्री पं० लेखराम कृत उर्दू जीवन-चरित में शास्त्रार्थ-बरेली के विषय में निम्न उपयोगी विवरण दिया गया है—

[आरम्भिक निवेदन]

''विदित हो कि यह लिखित शास्त्रार्थ बड़े आनन्द के साथ, जैसा कि प्राय: सुसभ्य, सुयोग्य और विद्वान् पुरुषों में हुआ करता है और जैसा कि वास्तव में होना भी चाहिये, स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी और पादरी टी०जी०स्काट साहेब के मध्य राजकीय पुस्तकालय बरेली में तीन दिन तक ता० २५, २६ और २७ अगस्त सन् १८७९ ई० को लाला लक्ष्मीनारायण साहेब खजांची रईस बरेली की अध्यक्षता में हुआ।''

अन्य नियमों के साथ ही इस शास्त्रार्थ के मुख्य नियम इस प्रकार थे—

''शास्त्रार्थ लिखित होगा। तीन लेखक—एक स्वामीजी की तरफ, दूसरा पादरी साहेब की तरफ, और तीसरा अध्यक्ष महोदय की तरफ बैठकर शास्त्रार्थ के प्रत्येक शब्द को सावधानी के साथ ज्यों का त्यों लिखते जायेंगे। जिस समय एक विद्वान् निश्चित समय के अन्दर कथन

१. यह स्थान कुतुबख़ाना के नाम से आज भी जाना जाता है।

समाप्त कर चुके, तो उसका लिखा हुआ वक्तव्य सभा में उपस्थित पुरुषों को सुना दिया जावे, और तीनों प्रतियों पर उसके हस्ताक्षर कराये जावें। और जब शास्त्रार्थ समाप्त हो, तो उस पर अध्यक्ष महोदय के हस्ताक्षर भी कराये जावें। इन तीन प्रतियों में से एक स्वामीजी के पास, दूसरी पादरी साहेब के पास, और तीसरी अध्यक्ष महोदय के पास प्रमाण स्वरूप रहे, जिससे कि बाद में भी उन में किसी प्रकार की घटा-बढ़ी न हो सके।''

इसके बाद फिर प्रार्थना के रूप में लेख है—

''हम इस शास्त्रार्थ को अक्षरशः मूल के, कि जिस पर स्वामीजी और पादरी साहेब के हस्ताक्षर हैं, अनुसार करके और स्वामीजी के आदेशानुसार तैयार करके, इसको छापेखाने में छपवाते हैं। इसमें किसी अक्षर का भी परिवर्तन नहीं किया है। इसको शुद्ध रूप में प्रस्तुत करने के लिये यहां तक सावधानता रखी गई है कि जहां जिस विद्वान् के हस्ताक्षर थे, वहां हस्ताक्षर का शब्द लिखकर उसी का नाम लिख दिया है। पाठक दोनों विद्वानों के लेखों अथवा वक्तव्यों को सत्यासत्य-विवेचक दृष्टि से देखें, और किसी प्रकार के पक्षपात को पास न आने दें, जिससे कि सत्य और असत्य का प्रकाश भली प्रकार हो जावे। कुछ सज्जनों का कथन है कि इन शास्त्रार्थों के अन्त में निर्णय भी निकाल देना चाहिए। परन्तु हमने अपनी सम्मति प्रकाशित करना उचित नहीं समझा। निर्णय करने का काम पाठकों की सत्यता-प्रेमी बुद्धि पर ही छोड़ा जाता है।''

इस भूमिका और प्रार्थना आदि की शब्द रचना से ज्ञात होता है कि यह लेख श्री लाला लक्ष्मीनारायणजी, जो कि अध्यक्ष थे, की ओर से ही है और उन्होंने ही इस विवरण को सर्वप्रथम प्रकाशित किया था। इस पुस्तक के विषय में धर्मवीर श्री लेखरामजी आर्य मुसाफिर कृत महर्षि उर्दू जीवन-चरित में पृष्ठ ७९८ (हिन्दी संस्करण पृष्ठ ८२८) पर लिखा है—

''बड़ी सावधानी के साथ प्रथमवार मास सितम्बर सन् १८८७ ई० में 'आर्य भूषण यन्त्रालय' शाहजहांपुर में मुद्रित हुआ और दोबारा 'आर्य दर्पण प्रेस' शाहजहांपुर में, और चौथी और पांचवीं बार उर्दू व हिन्दी में लाहौर में मुद्रित हुआ है।''

॥ ओ३म् ॥

शास्त्रार्थ-बरेली

(सत्यासत्यविवेक)

ता० २५ अगस्त, सन् १८७९ ई०

विषय—पुनर्जन्म

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

जीव, जीव के स्वाभाविक गुण कर्म और स्वभाव अनादि हैं। और परमेश्वर के न्याय करना आदि गुण भी अनादि हैं। जो कोई ऐसा मानता है कि जीव की, और उसके गुण आदि की उत्पत्ति होती है, उसको उसका नाश मानना भी अवश्य होगा। और तिस के कारण आदि का भी निश्चय करना और कराना होगा। क्योंकि कारण के विना कार्य की उत्पत्ति सर्वथा असम्भव है। जो-जो जीव के पाप और पुण्य आदि कर्म प्रवाह से अनादि चले आते हैं, उनका ठीक-ठीक फल पहुँचाना ईश्वर का काम है। और जीवों का विना स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर के सुख-दु:ख का भोग करना असम्भव है। जब यह बात हुई, तब वारम्वार शरीर का धारण करना भी जीव को अवश्य है। क्योंकि क्रियमाण कर्म नये-नये करता जाता है। उनका संचित और प्रारब्ध भी नया-नया होता चला जाता है। जब इस सृष्टि में विद्या की आंख से मनुष्य देखे, तो सृष्टिक्रम और प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से ठीक-ठीक सिद्ध होता है, कि देखो जो आज सोमवार है, वही फिर भी आता है। महीना, रात, दिन आदि भी पुन: पुन: आते हैं। और गेहूँ का बीज बोने से फिर वही गेहूँ आता है।

—हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती जी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

इस आवागमन के विषय में केवल सत्य के लिये ही प्रयत्न करना चाहिये। हार-जीत की इसमें कोई बात नहीं है। यह सिद्धान्त पुराना तो है, परन्तु संसार में से मिटा जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि जितने जीवात्मा हैं, वे सदैव जन्म लेते रहते हैं। कभी मनुष्य की योनि में, कभी

बैल की योनि में, कभी बन्दर की और कभी कीड़े मकोड़े की योनि में उत्पन्न होते हैं परन्तु यह ऐसा सिद्धान्त है कि सुशिक्षित और उन्नत जातियां इसको छोड़ती जाती हैं। प्राचीन मिस्री लोगों ने पहिले इसे माना हुआ था, फिर छोड़ दिया। इसी प्रकार यूनानियों ने और रूमियों ने और अंग्रेजों ने भी छोड़ दिया। हमारे पुराने द्रविड़ लोग भी, जो कि हमारे गुरु थे, यही सिखलाते थे। और हम लोग सब के सब मानते थे। परन्तु रोशनी के फैलने से और विद्या प्राप्त करने से, इस पुराने और निराधार सिद्धान्त को छोड़ दिया। सो हमारा सवाल पण्डित जी से यह है कि इस सिद्धान्त को मानने के लिये कौन सी युक्तियाँ हैं? जब कोई विशेष प्रमाण दिया जायेगा तो हम उस का खण्डन करने के लिये आक्षेप करेंगे। फिर भी दो चार प्रश्न यहां पर हैं—

ईश्वर की आत्मा के अतिरिक्त और आत्मायें भी अनादि काल से अर्थात् अजल से हैं कि नहीं?

इस जन्म लेने से कभी छुटकारा मिलेगा, या नहीं?

आपका यह कथन है कि सब दु:ख जो संसार में होते हैं, दण्ड देने के लिये ही हैं, सो पुनर्जन्म केवल दण्ड के लिये है, या इस का कोई और कारण है?

यह भी एक प्रश्न है कि परमेश्वर हर समय सगुण है, या कभी निर्गुण भी होता है?

यह जन्म लेना उसी की खास कुदरत से हर समय होता रहता है, या किसी कुदरती कानून से होता है, जैसे कि बीज का उगना, फल का पकना, पानी का बरसना। इत्यादि।

—हस्ताक्षर टी०जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

तीन पदार्थ अनादि हैं। एक ईश्वर, एक कारण और सब जीव। जीव जन्म से कभी छुटकारा न पायेंगे। पुनर्जन्म दण्ड और पुरस्कार दोनों के लिये है। परमेश्वर सगुण भी है और निर्गुण भी और यह सदैव रहता है। कुदरती नियम उस का यही है कि जैसा जिसने पाप वा पुण्य किया है, उसको वैसा ही अपने सत्य न्याय से फल देता है। अब पादरी साहेब ने जो कहा था कि पुनर्जन्म का प्राचीन सिद्धान्त हमारे बीच में भी था। इससे

सिद्ध हुआ कि सब देशों में पुनर्जन्म का सिद्धान्त प्रचलित था। और जो यह कहा कि जो जातियां सुधरती जाती हैं, वे पुनर्जन्म के सिद्धान्त को छोड़ती जाती हैं—अब, इस पर एक सवाल है कि प्राचीन सभी बातें झूठी हैं, या उनमें से कुछ सत्य भी हैं, और नये सिद्धान्त सभी सत्य हैं, अथवा उनमें कुछ मिथ्या भी हैं। यदि पादरी साहेब कहें कि प्राचीन बातें और सिद्धान्त अब मानने के योग्य नहीं है। तब तो तौरेत और जबूर इत्यादि ग्रन्थ और बाइबिल वा इंजील की शिक्षायें आजकल की अपेक्षा से बहुत पुरानी हैं। वे भी अब न माननी चाहियें। यह कोई मानने योग्य प्रमाण की बात नहीं है कि पहिले मानते थे और अब नहीं मानते, इसलिये सच्ची या झूठी हैं। वा पहिले नहीं मानते थे, अब मानते हैं, इसलिये झूठी वा सच्ची हैं।

अब, पादरी साहेब ने कहा कि कुछ प्रमाण दें, तो हम उस पर आक्षेप करें। प्रमाण के लिये मैंने पहिले ही लिख दिया है, कि इस जीव के कर्म इत्यादि अनादि हैं। और, ईश्वर का न्याय करना इत्यादि भी अनादि हैं। जो कर्म का सिद्धान्त न माना जाये, तो सृष्टि में बुद्धिमान्, निर्बुद्धि और दरिद्र, राजा और कंगाल की अवस्था ईश्वर किस प्रकार कर सकें। क्योंकि इसमें तरफदारी आती है। और, पक्षपात से उसका न्याय ही नष्ट हो जाता है। जब कर्म के फल हैं, तो परमेश्वर पूर्ण न्यायकारी बनता है, अन्यथा नहीं। और ईश्वर अन्याय कभी नहीं करता।

—हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती जी

पादरी स्काट साहेब

पण्डित जी के कहने से तमाम जीव अनादि हैं। अर्थात् अजल से हैं। तो इस हिसाब से हमारी और ईश्वर की अनादिता में कोई भेद नहीं। अर्थात् दो वस्तुएं अनादि काल से हैं। एक प्रकार से दो ईश्वर हुए। मेरा प्रश्न यह है कि ऐसा मानना—तौरेत, जबूर और इंजील के सर्वथा विरुद्ध है। मैं पूछता हूं कि कौनसा सिद्धान्त अधिक सन्तोषजनक है। अर्थात् एक यह कि हमारे जीवात्मा सदैव आवागमन के चक्कर में भागते फिरते रहेंगे और कभी बैल के शरीर में जायेंगे और कभी बन्दर के। कभी कीड़े मकोड़े के और कभी किसी अच्छे शरीर में। इस अनादिकाल से चल रहे चक्कर में अधिक सन्तोष है कि तौरेत, जबूर और इंजील के सिद्धान्त में कि अन्ततोगत्वा जो लोग नेकी करते और नेक बनते हैं, वे एक ऐसे सुखपूर्ण

स्थान में पहुँचेंगे कि उन्हें फिर कभी भी जन्म न लेना होगा। न ही उन्हें किसी प्रकार का कष्ट होगा। विचार कीजिये कि किस ग्रन्थ की शिक्षा अधिक सन्तोषजनक है। इसके अतिरिक्त ईश्वर निर्गुण और सगुण दोनों प्रकार का कैसे हो सकता है? अर्थात् वह विशेषणों वाला भी है और विशेषणों से रहित भी है वह कौनसी वस्तु है कि जो विशेषणों से रहित है? बताइये—यदि उसमें न्याय करने का गुण न हो, तो न्याय क्योंकर करे, और पुनर्जन्म के रूप में लोगों को दण्ड किस प्रकार देवे? ऐसे ही निराधार विचारों पर आधारित होने के कारण सुशिक्षित जातियां इस सिद्धान्त को छोड़ती जाती हैं। इसके अतिरिक्त यदि यह पुनर्जन्म दण्डस्वरूप है, तो इसमें दण्ड क्या हुआ? उदाहरण के लिये जब बन्दर यह जानता ही नहीं कि मैंने क्या अपराध किया है। या कोई पादरी साहेब, या पण्डित साहेब अत्यन्त तुच्छ कीड़े के शरीर में उत्पन्न हुआ, तो उनको दण्ड कैसा हुआ। वे तो जानते ही नहीं कि हमने क्या-क्या अपराध किये हैं? क्या कभी किसी को याद आया है, या आता है कि मैं अमुक काल में बन्दर था, अथवा मैं किसी समय गीदड़ था। और, जब कुछ दुनिया में किसी को भी याद नहीं है तो फिर ऐसे पुनर्जन्म में किसी के लिये क्या दण्ड की बात रह जाती है। हम तो यह मानते हैं कि दु:ख कभी-कभी दण्ड स्वरूप होता है, और कभी नहीं भी।

—हस्ताक्षर टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वती

दोनों अनादि होने से बराबर नहीं होते, जब तक कि उनके सब गुण बराबर न हों। परमेश्वर अनन्त है और जीव सान्त। परमेश्वर सर्वज्ञ है, जीव अल्पज्ञ। परमेश्वर सदा पवित्र और मुक्त तथा जीव कभी पवित्र, कभी बन्ध और कभी मुक्त। इसलिये दोनों बराबर नहीं हो सकते।

तौरेत, जबूर और इंजील के विरुद्ध होने से ही कोई बात सच्ची और झूठी नहीं हो सकती। क्योंकि तौरेत आदि में भ्रम से सच को झूठ और झूठ को सच बहुत जगह लिखा है। सच्ची तो उस किताब की बात हो सकती है कि जिस में आरम्भ से अन्त तक एक भी बात झूठ न हो। ऐसी किताब वेदों के अतिरिक्त भूगोल में ईश्वरकृत और कोई नहीं। क्योंकि ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव से अनुकूल वेद ही पुस्तक है, दूसरी नहीं। सिवाय वेद के उपदेश के किसी भी किताब में ठीक-ठीक

सब बातों का निश्चय नहीं नजर आता है। इसलिये सबसे उत्तम वेद की ही शिक्षा है, दूसरे की नहीं।

परमेश्वर अपने गुणों से सगुण है अर्थात् सर्वज्ञ आदि गुणों से, और निर्गुण—कारण के जड़ आदि गुण तथा जीव के अज्ञान, जन्म-मरण, भ्रम आदि गुणों से रहित होने से परमात्मा निर्गुण है। इस लिये यह निश्चय जानना चाहिये कि कोई पदार्थ भी इस रीति से सगुणता और निर्गुणता से रहित नहीं है।

जब जीव का पाप अधिक और पुण्य कम होता है, तब उसे बन्दर आदि का शरीर धारण करना पड़ता है। और, जब पाप-पुण्य बराबर होते हैं, तब [सामान्य] मनुष्य का। और, जब पाप कम और पुण्य अधिक होता है, तब विद्वान् इत्यादि का।

—हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती जी

पादरी स्काट साहेब

सब पुराने सिद्धान्त मिथ्या नहीं हैं। और, न ही सब नये सिद्धान्त सत्य हैं। परन्तु जब सुशिक्षित जातियां भली प्रकार विचार विमर्श करके किसी सिद्धान्त को मिथ्या उद्घोषित करती हैं, तो यह दृढ़ प्रमाण है कि वह सिद्धान्त मिथ्या है। और एक ही बार के जन्म लेने के विषय में सोच लीजिये।

तौरेत नई नहीं है। यह भी बहुत पुरानी है। तौरेत किसी प्रकार भी वेद से नई नहीं है उसमें पुनर्जन्म का कुछ भी उल्लेख नहीं है। तौरेत और इंजील सत्य हैं वा मिथ्या यह आज का विषय नहीं है। इस विषय को व्यर्थ ही खण्डित करना कि ये मिथ्या नहीं, अथवा वेद के विषय में, कुछ नहीं कहना है। क्योंकि यह भी आज का विषय नहीं। परन्तु इस बात पर ध्यान दीजिये कि सुशिक्षित और उन्नत जातियां तौरेत और इंजील की शिक्षाओं पर दृढ़ रहती हैं। इसके प्रतिकूल हिन्दू लोग ज्यों-ज्यों उन्नत और सुशिक्षित होते जाते हैं वेद को छोड़ते जाते हैं। आवश्यकता हो, तो मैं सैकड़ों प्रमाण दे सकता हूं। और यह कहना कि कर्म अनादि काल से है, इसलिये पुनर्जन्म होता है। तब तो परमेश्वर को भी जन्म लेना चाहिये। और यदि कोई कहे कि उसके सब कर्म अच्छे हैं, तो क्या कठिन है कि उस की दया और कृपा से हम लोग भी ऐसे दृढ़ और उत्तम हो जावें कि हमें बन्दर या गीदड़ बनना न पड़े। जैसा कि हमारे पवित्र

धर्मग्रन्थ में लिखा है—"एक बार मनुष्य के लिये मरना है। बाद इसके न्याय।"

निर्गुण और सगुण के विषय में स्वामीजी के अर्थ को मैं नहीं मानता। निर्गुण का यह अर्थ नहीं है कि कोई गुण न हो। जब उसमें गुण नहीं है, तब तो वह सगुण भी नहीं हो सकता। फिर इस समय जन्म-मरण का प्रबन्ध कौन करता है? अब फिर मैं पूछता हूं कि यदि दण्ड-भोग के लिये जन्म लेता है, तो यह चाहिये कि दण्ड भोगने वाला यह जाने कि मुझे दण्ड क्यों भोगना पड़ा है। अन्यथा दण्ड भोग की सब बात ही व्यर्थ हो जाती है। मैं फिर पूछता हूं कि किसी को याद क्यों नहीं रहता? कि तुम बन्दर या गीदड़ पिछले जन्म में थे।

—हस्ताक्षर टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

पहले प्रश्न के विषय में उत्तर—जीव अल्पज्ञ है, इसलिये पूर्व जन्म की बात को याद नहीं रख सकता। पादरी साहब को विचार करना चाहिये कि ऐसी बात क्यों पूछते हैं। क्योंकि इसी जन्म में जन्म के पांच वर्ष तक की बातें भी क्यों नहीं याद रहती? और सुषुप्ति अर्थात् गहरी नींद में जब सो जाता है, तब जागरित अवस्था की बात एक भी याद नहीं रहती। और कार्य-कारण के अनुमान से अर्थात् कार्य का निश्चय कर लिया। सब विद्वान् लोग मानते हैं कि जब पाप पुण्य का फल दुःख सुख, नीच-ऊंच जगत् में दीखता है, तो कारण जो पूर्वजन्म का कर्म है, सो क्यों नहीं? पुरानी और नई शिक्षा वा सिद्धान्त की बात दृष्टान्त के लिये पर्याप्त नहीं है। क्योंकि वह सर्वथा सत्य नहीं। और जिनको आप सुशिक्षित कहते हैं, उन जातियों में से कोई मनुष्य अर्थात् दार्शनिक वा विचारक बन्दर से मनुष्य का होना मानता है। यह सर्वथा मिथ्या है।

ये वेद की ही बातें हैं कि वेदी का बनाना। इब्राहीम को ईश्वर ने कहा कि इससे मैं प्रसन्न होता हूँ। तुम यज्ञ किया करो। इत्यादि वेदों की बातें बाईबिल में मौजूद हैं। और ईसा ने साक्षी दी है कि इसका एक बिन्दु भी झूठ नहीं है।

इसलिये और भी एक प्रमाण देता हूँ कि आज कल मोक्षमूलर अपने ग्रन्थों में लिखते हैं कि ऋग्वेद से पहिले की कोई भी पुस्तक संसार में नहीं है। अब मैं सैकड़ों साक्षियाँ दे सकता हूँ कि बाइबिल इन इण्डिया

के बनाने वाले इत्यादि और आजकल के सैकड़ों विचारकों की वाणी से मैंने सुना है कि बाइबिल वा इंजील को नहीं मानते। और कर्नल अल्काट इत्यादि ने भी बाइबिल की शिक्षा को सर्वथा त्याग दिया है। और हमारे आर्य लोग—एफ० ए०, बी० ए०, एल० डी०, लाखों लोग बाइबिल को सर्वथा नहीं मानते और वे सभी सुशिक्षित हैं। अस्तु; पादरी साहब का यह कथन पर्याप्त नहीं है। परमेश्वर का पुनर्जन्म नहीं होता। क्योंकि वह अनन्त और सर्वव्यापक है। वह शरीर में नहीं आ सकता। वह तो नित्य मुक्त है। बन्धन का काम कभी नहीं करता।

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

पादरी स्काट साहेब

पण्डित जी का पक्ष, बालक के उदाहरण से कि वह किसी बात को याद नहीं रखता, जो कि बचपन में हुई हो, मिथ्या सिद्ध होता है। इसलिये कि बच्चे कुछ न कुछ तो याद रख ही लेते हैं। और फिर यह भी प्रश्न होता है कि जब हमारे आत्मा अनादि काल से हैं, तब तो हम भी बच्चे की अपेक्षा से कुछ बढ़ गये हैं। हमें कुछ न कुछ तो वृत्तान्त ज्ञात होने ही चाहियें। परन्तु ऐसा नहीं होता। इस युक्ति पर विचार कीजिये।

यह सम्भव प्रतीत नहीं होता कि हम अनादिकाल से चले आ रहे हैं। और, जन्म ग्रहण करके यदि सब बातें भूल गये हैं, तब तो जन्म धारण करने का दण्ड ग्रहण करने का भी कुछ अर्थ न निकला। और नींद का जो वर्णन किया गया, सो इस उत्तर से सिद्ध होता है कि नींद की बात भी याद रहती है। कतिपय तो नींद के समय बड़े उत्तमोत्तम विचार प्रकट करते हैं। यहाँ पर मैं एक पुष्ट प्रश्न और करना चाहता हूँ। वह यह कि इस शिक्षा से संसार में पाप को प्रोत्साहन प्राप्त होता है। क्योंकि लोग कहते हैं कि जो चाहें सो करें, भोगेंगे तो फिर कभी किसी अन्य योनि में ही। अच्छा जन्म भी कभी होगा। यह भी कहते हैं कि यह परम्परा सदैव चलती रहेगी। क्या करें, हम मानते हैं कि संसार में जो दुःख हैं, उनका कोई न कोई कारण अवश्य है। कभी बुरों को दण्ड के लिये और कभी अच्छों को कि उनको अनेक प्रकार की शिक्षा मिली है।

कहानी है कि बादशाह का लड़का था। पण्डित के पास पढ़ने के लिये भेजा गया। पण्डित ने उसको सब प्रकार से सुशिक्षित करके योग्य बनाया। फिर बादशाह के पास लाया। और, उस से कहा कि केवल एक ही काम बाकी है। उसने पूछा कि इस ने कोई अपराध किया। कहा कि नहीं। तब कहा कि मुझे चाबुक देना। और खुद सवार होकर लड़के से कहा कि दौड़ो। और उसको खूब मारता गया। फिर बादशाह के पास ले आया। बादशाह ने कहा कि ऐसा क्यों किया? पण्डित ने कहा इसलिये कि दूसरों पर दया करना सीखे और दयालु व कृपालु बन जाये। सो यह सम्भावना है कि अच्छे मनुष्यों को भी कष्ट भोगना पड़े, किसी अच्छे उद्देश्य के लिये। यह कुछ आवश्यक नहीं है कि पुराने जन्म के कारण से। डारविन साहेब पुनर्जन्म को नहीं मानते। वे केवल यही कहते हैं कि संसार में विकास क्रम से नीची योनियों के प्राणी ऊँची योनियों को प्राप्त हो गये हैं। उनका यह अभिप्राय नहीं है कि कोई प्राणी जो जब है, वह पहिले भी था। कर्नल अल्काट साहेब की जो चर्चा चली है, सो उसका जो पक्ष है, वह सुन लीजिये। तब मालूम होगा कि वे कैसे आदमी हैं?

—हस्ताक्षर टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

लड़के के उदाहरण से मेरा यह अभिप्राय है कि वह जो कुछ सुख दुःख भोगता है, उसकी स्मृति उसे स्वयमेव नहीं होती, कहीं किसी के कहने से होती है। और जीव का स्वाभाविक गुण एक-सा रहता है। परन्तु नैमित्तिक गुण घटते बढ़ते रहते हैं। इसलिये जीव एक से हैं। परन्तु उसके ज्ञान की सामग्री पाँच वर्ष के पश्चात् बढ़ जाती है। अब यदि पादरी साहेब को या मुझको कोई पूछे कि दस वर्ष से पहिले किसी से एक दिन भर बात-चीत क्या की? क्या वह सम्पूर्ण पदों और अक्षरों सहित याद है? तो यही कहना पड़ेगा कि ठीक-ठीक याद नहीं है। जब सदा से जीव नहीं आते, तो फिर कहाँ से हुए? जेलखाने के कैदियों को यद्यपि सब लोग ठीक-ठीक नहीं जानते, तथापि अनुमान करते हैं कि किसी अपराध के करने से जेलखाने में पड़े हैं। इससे हम कभी भी अपराध न करें। अन्यथा हमारा भी यही हाल होगा। पादरी साहेब मेरे अभिप्राय को नहीं समझे। वह स्वप्न की बात नहीं, सुषुप्ति की बात है कि जिस नींद में कुछ भी स्मरण नहीं रख सकता। जो पुनर्जन्म को नहीं मानते, उनकी शिक्षा से संसार में पापों की वृद्धि होती है। क्योंकि फिर आगे जन्म लेने की बात तो वे मानते ही नहीं हैं। जो मन में आवे, वही करते हैं और मरने पर

व्यर्थ ही हवालाती के समान पड़े रहते हैं। आज मरे, कियामत तक हवालात में रहें। कचहरी के द्वार बन्द हैं, और खुदा बेकार बैठा है। जो दोजख़ में गया, वह वहाँ का हो गया। जो जन्नत में गया, वह वहाँ का हो गया। और, कर्म तो ससीम किये जाते हैं, परन्तु उसका फल असीम प्राप्त होता है। इस प्रकार ईश्वर बड़ा अन्यायी ठहरता है। और आशावादिता के विना मनुष्य सुधर नहीं सकते। केवल रंज में दुःख का कारण क्या है? और यदि शिक्षण के लिये उसको कष्ट दिया जाता है, वह सुधार के लिये है। परन्तु उसका फल तो विद्या आदि है। और पादरी साहेब ने कहा था कि एक स्थान में सदैव सुख दुःख भोगेंगे वह स्थान कौन-सा है।

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

कर्नल अल्काट साहेब का एक कागज मेरे पास है कि जिसमें ईसाइयों की, और पादरियों की ईसाई दीन की व्यर्थ ही कठोर भाषा में बहुत बुराई लिखी है। वह इतनी अधिक कठोर है कि मैं किसी बाजारी व बदमाश के लिये भी न बकता। कहते हैं कि ये कठोर और निर्दयी हैं। यह ईसाई दीन संसार में सारी बुराई और खराबी की जड़ हैं। इसके अतिरिक्त और भी कई प्रकार से कठोर भाषा का प्रयोग किया गया है। जरा विचार कीजिये कि इस व्यक्ति का हृदय और उसकी बुद्धि किस प्रकार की होगी।

यह बात सिद्ध नहीं होती कि वेद तौरेत की अपेक्षा अधिक पुराना है। इस वास्ते कि तौरेत में यज्ञ का वर्णन है और हम दावे से कह सकते हैं कि सर्वप्रथम तौरेत में ही यज्ञ का वर्णन हुआ और वेद वालों ने वहाँ से ले लिया। दोनों बातों का दोनों में ही वर्णन है। निश्चित से कोई नहीं कह सकता कि किस ने किस से ले लिया। और यह कहना कि कुछ गुण स्थायी हैं और कुछ अस्थायी, इसलिये इस जन्म की बातें हमें याद नहीं रहती। कुछ गुण तो स्थायी हैं ही। अतः यह अवश्य ही होना चाहिये कि पिछले जन्म की कोई बात तो याद हो। यदि हमारी और पण्डित जी की बातचीत इस वर्ष कहीं हुई हो, तो कुछ बातें तो अवश्य ही याद रहती हैं।

निद्रा का उदाहरण ठीक नहीं है। क्योंकि कभी कभी नींद में बात याद नहीं रहती और कभी-कभी याद रहती भी है। जेलखाने का उदाहरण भी पूरा ठीक नहीं है। क्योंकि इसमें दण्ड का केवल एक ही अभिप्राय

प्रकट होता है। दण्ड के दो अभिप्राय हैं। एक तो दण्डित व्यक्ति का सुधार और दूसरे देखने वालों को शिक्षा। परन्तु इस पुनर्जन्म में तो केवल देखने वालों की शिक्षा की ही कुछ व्यवस्था मानी जा सकती है। यह नहीं कि उसे यह दण्ड क्यों मिला है?

रहा यह प्रश्न कि आत्मायें कहां से आईं? शिक्षित जातियों में आजकल यह सिद्धान्त है कि जैसे बीज से वृक्ष और वृक्ष से बीज उत्पन्न होते हैं, और कोई भी यह नहीं कहता कि पहिले वृक्ष हुआ, अथवा पहिले बीज हुआ है। इसी प्रकार रूह से शरीर और शरीर से रूह उत्पन्न होते हैं। तथापि यह बात हमारे लिये बुद्धिगम्य नहीं है कि ऐसा किस प्रकार होता है? परन्तु ऐसा नहीं है कि जो रूह अब मौजूद है, वह पहिले किसी अन्य शरीर में थी। वह अभी पैदा हुई है और जब यहां से जावेगी, तो उसका यथोचित न्याय होगा, कर्मानुसार। इससे परमेश्वर अन्यायी नहीं है। अपितु इससे भी परमेश्वर का न्याय सिद्ध होता है। यह कहना कि रूह सदा कहां रहती है? हम यह नहीं कहते कि हम परोक्ष की बातें जानने वाले हैं कि सुख वा दुःख के स्थान बतावें। ईश्वर सर्वशक्तिमान् है। वह रूह को सभी स्थानों पर सुख अथवा दुःख दे सकता है। हमारा जानना या न जानना क्या हुआ।

—हस्ताक्षर टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

जो कर्नल अल्काट साहेब के विषय में पादरी साहेब ने कहा कि वह अच्छा मनुष्य नहीं है, सो मैं ठीक नहीं मान सकता। क्योंकि जिनका जिनसे विरोध होता है, वे उनके विषय में उलटा सूधा कहा ही करते हैं। वेद तौरेत की अपेक्षा बहुत पुराना है। और जिसकी बात पूरी से अधूरी दूसरी में लिखी हो, तो दूसरी ही पुस्तक बाद की होती है। बालकपन में नैमित्तिक गुण कम थे और स्वाभाविक गुण एक से हर समय रहते हैं। इस बात को पादरी साहेब ठीक-ठीक नहीं समझे। जो कि आग के संयोग से जल में उष्णता आती है, वह नैमित्तिक और जो आग में उष्णता आती वा दाहकता है, वह स्वाभाविक है। जो-जो जीव के स्वाभाविक गुण हैं, वे न्यूनाधिक कभी नहीं होते।

और, पादरी साहेब ने कहा कि जेलखाने के कैदियों को देखकर देखने वालों को भय होता है कि मैं ऐसा कर्म न करूँ। परन्तु जिसको दण्ड पूर्व जन्म के कर्मों का मिलता है, उसको याद ही नहीं। जैसे और

लोग कार्य-कारण को जानते हैं, क्या वे न जानेंगे कि दण्ड अवश्य ही कर्मों का होता है।

एक वैद्य को ज्वर आया और एक मूढ़-गंवार को भी। वैद्य ने अपनी विद्या के प्रभाव से ज्वर के कारण को जान लिया कि अमुक कारण है। परन्तु उस गंवार ने न जाना। फिर भी ज्वर का कष्ट तो दोनों ही अनुभव करते हैं। फिर भी गंवार इतना अवश्य ही जानता है कि कोई न कोई बदपरहेजी हुई है और इसीलिये यह ज्वर आया है। इससे उसे दण्ड द्वारा सुधारने का फल प्राप्त होता है कि जो मैं बुरा काम करूँगा तो बुरा फल जैसा कि उसको है, मुझे भी प्राप्त होगा।

जब जीव से शरीर और शरीर से जीव पैदा होते हैं, तो आपका बनाने वाला परमेश्वर नहीं। इससे आपका कथन ठीक नहीं रहा। और आपके कथनानुसार जो जीव प्रथम-प्रथम उत्पन्न हुए, वे किन शरीरों से हुए? जो कहें परमेश्वर से तो परमेश्वर भी आदमी, घोड़े और वृक्ष तथा पत्थर के समान हुआ। क्योंकि जिसका कार्य जैसा होता है, उसका कारण भी वैसा ही होता है। और जीवों को मध्य में हवालातियों के समान दौरासुपुर्द करना—बहुत दिन तक कि जो दण्ड से भी भारी है, फिर उसको स्वर्ग मान के किन कर्मों से मिल सकता है? कोई भी नहीं। जब आप सर्वज्ञ नहीं हैं, तो फिर ऐसा क्यों कहते हैं कि पुनर्जन्म नहीं होता। इससे आपका एक जन्म सिद्ध नहीं हुआ और पुनर्जन्म सिद्ध हो गया।

—हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती जी

ता० २६ अगस्त, सन् १८७९

विषय—ईश्वर देह धारण करता है

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

आज का सवाल यह है कि परमेश्वर देह धारण करता है, अर्थात् साकार हो सकता है या नहीं। उचित यह है कि इस विषय में अत्यन्त सावधानी से और गम्भीरता पूर्वक विचार-विमर्श और प्रश्नोत्तर किया जावे। जब उस सर्वेश्वर के विषय में वार्तालाप हो, तो मनुष्य को चाहिये कि बहुत सोच समझ कर और गम्भीरता के साथ बोले। इस विषय में अहंकार और अभिमान की कुछ भी गुञ्जाइश नहीं है। किसी को भी ऐसा

घमण्ड नहीं करना चाहिये कि हम ईश्वर के विषय में सब कुछ जानते हैं। कवि का कथन है—

अर्श से ले फर्श तक, जिसका कि यह सामान है।
हिम्द उस की गर लिखा, चाहूँ तो क्या अमकान है॥[१]
जब पेगम्बर ने कहा हो, मैंने पहिचाना नहीं।
फिर कोई दावा करे, उसका बड़ा नादान है॥

विचार कीजिये कि ईश्वर की अनादिता के विषय में हम क्या जानते हैं? सो, इसी प्रकार हम सर्वशक्तिमान् के विषय में क्या जानते हैं? वह सर्वव्यापक अर्थात् प्रत्येक स्थान पर मौजूद है, उसके विषय में हम क्या जानते हैं? हाँ, इन शब्दों के कुछ-कुछ अर्थ हम जानते हैं। परन्तु यह कथन तो मूर्खों का ही है कि ईश्वर के विषय में हम सब कुछ जानते हैं। आज के वार्तालाप में दो प्रश्न ये हैं—कि क्या ईश्वर देह धारण कर सकता है? दूसरे यह कि ऐसा कभी हुआ है, कि नहीं। विशेष रूप से पहली बात का ही विचार इस समय है। पहले प्रश्न का भाव यह है कि क्या यह सम्भव है कि ईश्वर अपने आपको कभी सदेह रूप में प्रकट करे? ध्यान दीजिये। यह भाव कदापि नहीं है कि ईश्वर सदेह बन जाये। प्रथम पक्ष यह है कि देह धारण करने की सम्भावना है। आत्मा और परमात्मा बहुत-सी बातों में समान हैं। अपितु यह कहना चाहिये कि दोनों की एक ही जाति है। क्योंकि ईश्वर की वाणी में लिखा है कि—'खुदा ने इन्सान को अपनी सूरत पर बनाया।' यह नहीं कि शारीरिक रूप में अपने जैसा बनाया, अपितु भाव यह है कि आध्यात्मिक रूप में। अर्थात् बहुत-से गुण कर्म और स्वभाव, जो ईश्वर में हैं, वे ही मनुष्य में भी हैं। अर्थात् दया, न्याय तथा और भी अनेक प्रकार की धार्मिक विशेषतायें। इस कारण ईश्वर के साथ मनुष्य मेल कर सकता है। ऐसी अवस्था में हम लोग जो कि स्वयं सशरीर हैं, क्यों अहंकार करें कि ईश्वर साकार न हो। यदि उसकी इच्छा हो कि वह सदेह रूप में प्रकट हो तो क्या

---

१. आकाश से लेकर पृथ्वी पर्यन्त यह नाना प्रकार का जड़-जंगम-स्वरूप संसार, जिसका है, मैं यदि उसकी महिमा का गान करना भी चाहूं तो कैसे करूं। उसके गुण कर्म स्वभाव और पदार्थ तो अनन्त हैं। और मेरी सामर्थ्य बहुत ही अल्प है।

बाधा है? —**हस्ताक्षर पादरी टी० जी० स्काट साहेब**

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

जो पादरी साहेब ने कहा, उसकी परीक्षा हम नहीं कर सकते। इस पर सवाल यह है कि सर्वथा नहीं कर सकते, या कुछ-कुछ कर सकते हैं। वैसे सर्वव्यापक के विषय में कुछ जानते हैं, या नहीं? और जो कुछ जानते हैं, तो कितना? जो किसी का कहना हो कि मैं ईश्वर को जानता हूं, तो वह मूर्ख है और जो यह पादरी साहेब का कहना है, तो कुछ उसके जानने में वश नहीं रहा। और पादरी साहेब अपने पहले कथन के विरुद्ध बोले हैं। वह यह है कि ईश्वर देह धारण करता है। कर सकता है, या नहीं ऐसा नहीं। लेकिन देह धारण करता है।

यहाँ प्रश्न होता है कि उसको क्या आवश्यकता देह धारण करने की है? दूसरे उसकी इच्छा में कोई बन्धन है, या नहीं? तीसरे, वह निराकार है या साकार? चौथे, वह सर्वव्यापक है, या एकदेशी?

जीव और ईश्वर के गुण दया आदि क्या ठीक-ठीक मिलते हैं, या नहीं? बहुत से जीवों में भी दया देखने में आती है।

प्रश्न—वे दोनों एक हैं, तो दोनों ही खुदा हैं। इसका क्या उत्तर है?

आध्यात्मिक पक्ष में जो परमेश्वर देहधारी होता है, जब वह सम्पूर्ण ही देह में आ जाता है, या टुकड़े-टुकड़े होकर आता है? यदि टुकड़े-टुकड़े होकर आता है, तो नाश वाला हुआ। और जो वह सम्पूर्ण आ जाता है, तो शरीर से छोटा हुआ। फिर तो ईश्वर ही नहीं हो सकता। जीव तथा ईश्वर में कुछ भी भेद नहीं आ सकता है।

और यदि वह एकदेशी है, तो एक स्थान पर रहता है या घूमता फिरता है। यदि कहो कि एक स्थान पर रहता है, तो उसको सब स्थानों की खबर रहना असम्भव है। और जो घूमता फिरता है, तो कहीं अटक भी जाता होगा। और धक्का और शस्त्र भी लगता होगा। जब परमेश्वर सृष्टि करता है, तब निराकार स्वरूप से या साकार से? जो कहो निराकार स्वरूप से, तो ठीक है। और जो कहो कि देहधारी होकर, तो उसका सृष्टि रचना सर्वथा असम्भव है। क्योंकि त्रसरेणु आदि पदार्थ सृष्टि का कारण रूप उसके वश में कभी नहीं आ सकते हैं।

—**हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वती**

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

हम नहीं कहते हैं कि ईश्वर को सर्वथा जान ही नहीं सकते। लेकिन तो भी बहुत बातें हैं, जो हम सर्वथा नहीं जान सकते। सर्वव्यापक के विषय में यह सिद्धान्त है कि वह ऐसा है, परन्तु यह कोई नहीं कह सकता कि इसका पूर्ण अभिप्राय हम को मालूम है। यह तो कह सकते हैं कि ईश्वर ने देह धारण किया। परन्तु उसका अपने आप का देह में धारण करना एक रहस्य है। अपितु हमारे आत्मा का विषय भी शरीर के साथ रहस्यमय है। रहा यह प्रश्न कि ईश्वर की इच्छा में बंधन है, या नहीं। पण्डित जी इस बात को कुछ और स्पष्ट करने की कृपा करें। मैं कहता हूं कि परमात्मा अर्थात् खुदा की रूह और इन्सान की रूह सर्वथा एक जैसी ही नहीं है। एक ससीम है और दूसरी असीम। इसलिये दो खुदा नहीं हैं। इनमें एक रचने वाला है दूसरा रचा गया है। परन्तु ईश्वर की इच्छा हुई और उसने इन्सान को अपने जैसा ही बनाया है।

रहा यह प्रश्न कि ईश्वर सम्पूर्ण देह में आ जाता है, हां आ जाता है। मगर तो भी बाहिर भी रहा। वह सर्वव्यापक है, तो उस देह के अन्दर क्यों नहीं है? हम यह नहीं कहते कि केवल शरीर में ही है, और कहीं नहीं है। विचार कीजिये कि इस कमरे के अन्दर वह सर्वशक्तिमान् इस समय मौजूद है। वह अनादि परमेश्वर इस समय मौजूद है। अर्थात् ईश्वर अपने सब गुणों सहित इस समय इस कमरे में मौजूद है। इस बात से कोई भी इन्कार नहीं कर सकता। तो इसमें क्या कठिनाई है? यदि उस की इच्छा यूं ही हुई तो अपने आप को एक शरीर में प्रकट करे। यह असम्भव नहीं है। उसकी इच्छा है। जब भी आवश्यकता हो अपनी लाचारी से नहीं करता; अपितु हम लोगों के लिये। क्योंकि हमारी बुद्धि यदि बहकाना जानती है, तो आगे चल कर हम देख लेंगे कि कोई उचित कारण है अथवा नहीं कि परमेश्वर देह धारण करे। यदि कोई कहे कि देह धारण करना, उसकी महिमा के विरुद्ध है, तो यह भ्रांतिपूर्ण है। यह किस बात में उसकी महिमा के प्रतिकूल है? देह में कुछ त्रुटि है, या कुछ अपवित्र है? अथवा कोई अशुद्ध वस्तु है कि ईश्वर उससे घृणा करे। देह को किसने बनाया है? क्या वह अब सर्वव्यापक नहीं है? अर्थात् क्या वह अब भी प्रत्येक देह में वर्तमान नहीं है?

—**हस्ताक्षर पादरी टी० जी० स्काट साहेब**

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

पादरी साहेब ने मेरे प्रश्नों के ठीक-ठीक उत्तर नहीं दिये। जब वह सर्वव्यापक है, तो एक देह में आना या एक से निकलना सर्वथा असम्भव है। ईश्वर ने देह धारण किया, इसकी क्या आवश्यकता है, और इसका भी कुछ जवाब नहीं दिया कि ईश्वर और जीव आध्यात्मिक रूप में सर्वथा समान हैं अथवा उनमें भिन्नता है। पादरी साहेब पहिले कह चुके हैं कि इन्सान की देह अपने शरीर से बनाई। इसके विरुद्ध पीछे कहा कि वे पृथक्-पृथक् हैं, एक नहीं। मुझसे पूछा कि पण्डितजी इसका स्पष्टीकरण करें। मैं पादरी साहेब के अभिप्राय का स्पष्टीकरण क्यों करूं? यह तो वे ही स्वयं बतावें। यह मैं भी जानता हूँ कि ईश्वर सर्वव्यापक है। इस कारण से वह अवतार धारण नहीं कर सकता। क्योंकि क्या पहिले वह उसमें न था? या उसमें एक था? अब दूसरा, तीसरा इस से उसमें हजारों घुस गये? जब वह असीम है, तो ससीम शरीर में देह धारण करना सर्वथा झूठ। और जो पादरी साहेब ने कहा कि उसने मनुष्य की रूह अपने स्वरूप में बनाई, तो मैं पूछता हूँ कि बन्दर किसके स्वरूप में बनाये? क्या बन्दरों का खुदा कोई दूसरा है? इस प्रकार से तो हाथी, घोड़े, आदि सब के ही खुदा जुदा-जुदा हो जायेंगे।

जब सर्व व्यापक है, तो उसने देह धारण नहीं किया। अपितु उसने तो संसार का अणु-अणु धारण कर रखा है। पादरी साहेब का यह कहना कि वह देह धारण करता है सर्वथा मिथ्या प्रमाणित हो जाता है। क्या वह पहिले धारण नहीं करता था? क्या सर्वशक्तिमान् परमात्मा अपनी इच्छा से देह धारण करता है? यदि हाँ, तो मैं पूछता हूँ कि वह अपनी इच्छा से देह छोड़ भी देता होगा। क्योंकि जो कोई पकड़ेगा, वह कभी न कभी अवश्य ही छोड़ेगा। और वह कभी अपने आपको मारने की भी शक्ति रखता है, वा नहीं? तब तो वह आपके कथनानुसार सर्वशक्तिमान् भी न रहेगा। जैसे अविद्या आदि और अन्याय करने आदि का उसका स्वभाव ही नहीं है, सो यह ही उसके जन्म और मरण में भी प्रतिबन्धक है। क्योंकि वह अपने स्वभाव के विरुद्ध कोई कार्य चरितार्थ नहीं कर सकता।

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

मेरा प्रश्न यह ही है कि क्या पंडितजी का यह अभिप्राय है कि अब परमेश्वर देहधारी है? क्योंकि उनकी युक्ति से प्रतीत होता है। वह यह दावा करता है कि परमेश्वर अब देह में हैं। और जब जो ये सूरतें सब दृष्टिगोचर होती हैं, सब उसका देह ही हैं। यदि ऐसा है, तब तो मेरा दावा सिद्ध ही हो गया। अब उसमें बाकी ही क्या रहा? देह धारण करने का क्या अर्थ है? इस वार्तालाप में, मैंने, जो देह पशु, पत्थर इत्यादि हैं, अनादि काल से परमेश्वर सर्वव्यापक तो हैं; परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि इस प्रकार से देहधारी है। जैसे जब कोई कहे कि अमुक व्यक्ति परमेश्वर का अवतार है, तो पण्डितजी इसमें झगड़ा क्यों करते हैं? देह धारण करने का अर्थ कौन नहीं जानता? और यह कहना कि इस विशेष अर्थ में ईश्वर के देहधारी होकर आने जाने का कुछ कथन नहीं है। अपितु केवल यही अर्थ है वह हमारे लिये शरीर में प्रकट हुआ। जब वह शरीर लुप्त हो जाता है, तब भी ईश्वर यहाँ वर्तमान रहता है। परन्तु वह ईश्वर की आत्मा उस समय भी उस शरीर में हैवानी आत्मा नहीं है। अभी रूह इस शरीर में प्रकट हुई। यह कोई आने या जाने का मामला ही नहीं है। मैंने साफ-साफ कहा है कि मनुष्य का आत्मा ईश्वर के आत्मा के समान है, परन्तु है सर्वथा भिन्न। बन्दर की स्थिति और है। उसका चर्चा करने की यहां क्या आवश्यकता है? रहा यह प्रश्न कि ईश्वर ने बन्दर को किसके स्वरूप पर बनाया। सो जैसी उसकी इच्छा हुई, वैसा उसने बनाया। अर्थात् बन्दर की सूरत, और गीदड़ की सूरत और बैल की सूरत और इन्सान को अपनी सूरत में। तब इसमें आक्षेप की क्या बात है?

अब रहा यह प्रश्न कि ईश्वर ने क्यों देह धारण की? इसका उत्तर देता हूँ। उसकी सम्भावना का होना तो कुछ सम्भव नहीं है। मकान के उदाहरण को स्मरण कीजिये। और यह भी कि देह धारण करने का अर्थ यह है कि अपने आप को एक देह में प्रकट करना। यदि इस घटना अथवा गति को आप समझ सकें, तो समझिये। हम डरते नहीं कि यह कहने लगें कि ईश्वर के गुण तो गति करते ही नहीं हैं। तो क्या वह जड़ पत्थर है? अथवा निर्गुण है? उसका आना जाना कुछ न हुआ। जीना मरना कुछ न हुआ। केवल मनुष्य की अल्प सामर्थ्य के कारण अवतार होना अर्थात् देह धारण करना। देह धारण करने में लाभ यह है कि मनुष्य के लिये

किसी पूर्ण गुरु, पथ-प्रदर्शक और आदर्श की जरूरत है। जब गुरु पूर्ण और आदर्श भी सर्वथा दोष रहित हो, तभी मनुष्य उन्नति करता है। अन्यथा जैसी चाहिये, वैसी उन्नति नहीं करता। क्योंकि उन्नति का साधन वा माध्यम अच्छा नहीं होता।

—हस्ताक्षर पादरी जी० टी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

जो पादरी साहेब ने कहा कि पण्डितजी के दावे ने मेरे दावे को साबित किया, यह बात गलत है। क्योंकि देह धारण करता है, इसका अर्थ यह है कि पहले वह देह में नहीं था। इस कथन ने तो पादरी साहेब के दावे को ही खारिज किया है, न कि साबित।

जो कि सर्वव्यापक है, वह देह धारण करता है, या करे, या छोड़े, यह कहना सर्वथा असम्भव है। और जब वह सर्वव्यापक है, तब देह धारण करने को कहाँ से आया? क्या ऊपर या नीचे से, अथवा बाहिर या बगल से। जो कहें कि किसी तरफ से आया, तो फिर तो वह सर्वव्यापक न हुआ। और जो कहें कि सर्वव्यापक है तो कहीं से आना साबित नहीं हो सकता। जाहिर होने में मैं पादरी साहेब से पूछता हूँ कि क्या पहले गुम था कि आँख से नहीं दीखा। जाहिर होने में दीख पड़ा। क्या रूह आँख से देखने का विषय है? जो कहें नहीं, तो फिर जाहिर होने का क्या अर्थ है? जैसे साँप बिल में से निकलकर, जाहिर होकर, फिर गुम हो जावे?

वैसे ही मैंने पूछा था कि बन्दर को किसकी सूरत में बनाया? उसका कुछ भी उत्तर नहीं दिया। क्या बन्दर और आदमी आदि का बनाने वाला एक ही खुदा है? अथवा दो जुदा-जुदा हैं।

जब उसके देह धारण करने में पादरी साहेब कुछ विशेष मामला नहीं दिखला सकते, तो बस, पादरी साहेब का तो मामला ही खारिज हो गया। जो पादरी साहेब ने कहा कि परमेश्वर के गुण गति करते हैं, यह सर्वथा झूठी बात है। क्योंकि गुण है, द्रव्य नहीं। गतिशील द्रव्य होता है, गुण नहीं।

जो पादरी साहेब कहें कि देह धारण करता जरूर है, तब तो उसकी जरूरत की बात भी ठीक-ठीक अवश्य ही बतलावें। और जो यह कहा कि मनुष्य की उन्नति के लिये देह धारण करता है, तब तो पहले कहे हुए सभी दोष पादरी साहेब के कथन में आते हैं। और मैं पूछता हूँ कि यह सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक क्या अपनी सामर्थ्य से जीवों की उन्नति नहीं करा सकता? जो कहें कि नहीं करा सकता, तो सर्वशक्तिमान् न रहा। और जो मैंने दोष दिये थे कि पादरी साहेब के कथनानुसार देह धारण करने पर तो परमाणु आदि को अपनी पकड़ में लाने का सामर्थ्य ही उसमें नहीं हो सकता। इतने दोष मौजूद रहे।

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

प्रत्येक बात में यह कहना कि यह झूठ है, सो शिष्टाचार के कुछ प्रतिकूल प्रतीत होता है। क्योंकि झूठ बेईमानी और फरेब है। और भी बहुत सी मिथ्या बातें हैं, जिनको कि झूठ कहना जरा शिष्टाचार विरुद्ध प्रतीत होता है। ईश्वर तो बन्दर की देह में सर्वव्यापक के रूप में है। परन्तु भले ही कोई उसको बन्दर बतादे, वैसे ही कोई उसको गीदड़ बता दे। परन्तु हाँ, अद्वैतवादी ऐसा ही कहेंगे। परन्तु, पण्डितजी तो द्वैतवादी हैं। यह मैं पूछता हूँ पण्डितजी से कि परमेश्वर के अतिरिक्त और भी कोई पदार्थ है संसार में वा नहीं? परन्तु जब ईश्वर का कोई खास अवतार हो, तो उस देह में वह सर्वव्यापक है। और परमेश्वर के सिवा और कोई जीव उसमें नहीं होता। उसको अवतार कहते हैं। इसमें कुछ आने जाने का यह मामला नहीं है। कोई स्याही ऐसी होती है कि जब उससे लिखते हैं, तो कुछ नजर नहीं आता। परन्तु वह लिखाई मौजूद होती है या नहीं। स्याही मौजूद है, अक्षर भी मौजूद हैं, उनको जरा आग के सामने दिखाओ, तो कुल लिखाई नजर आती है। पहले भी मौजूद तो थी, परन्तु नजर नहीं आती थी। इसी प्रकार परमेश्वर का नजर न आना, कुछ आने जाने का मामला नहीं है। उसने अपने आपको केवल हमारी कमजोरी के वास्ते इस शरीर में प्रकट किया है। वह कहीं गुम नहीं था। कहीं से आया नहीं। फिर इस विषय में मैं यह कथन करूंगा कि गुण का गति करना, यह है कि वह कार्य का रूप धारण करे, उपयोग में आवे। जैसे कि प्रेम और दया का रखना और न्याय करना।

और यह कहना कि देह धारण करने से परमेश्वर की लाचारी मालूम होती है, भ्रान्तिपूर्ण है। पण्डितजी का सिद्धान्त यह है कि जन्म लेने से

मनुष्य सुधर जाता है। तो इसमें भी परमेश्वर लाचार है, या उसकी इच्छा है। यदि वह सर्वशक्तिमान् है, तब तो ऐसा नहीं करना चाहिये कि लाचार है, पण्डितजी के कथनानुसार। और यदि उसकी इच्छा है, तो अपनी इच्छा से वह जानता है कि मनुष्य के विषय में कौनसा उपाय उत्तम है। परन्तु कुछ कुछ बातों के विषय में हम मानते हैं कि परमेश्वर लाचार है।

ध्यान दीजिये—यदि वह सर्वशक्तिमान् है, तो वह एकदम ही रूह को पवित्र क्यों नहीं कर देता? क्यों मनुष्यों को अनेक प्रकार के दुःख देता है। विचार करना चाहिये कि मनुष्य कर्म करने में पूर्ण स्वतन्त्र है। और खुदा उसके विषय में बलात्कार नहीं करता है। खुदा चाहता है कि वह सुधर जावे, परन्तु उसका सुधरना केवल खुदा के वश में नहीं है। खुदा ने इन्सान को ऐसा ही बनाया है और कर्म करने में स्वतन्त्र होना यह मनुष्य के महत्त्व का सूचक है। तो, इससे वह अपनी बहुत बड़ी हानि भी कर सकता है। ईश्वर ने उचित यही समझा कि मनुष्य को सुधारने के लिये पूर्ण आदर्श नमूने के तौर पर उसको दिखावे। खुदा के गुम होने से नहीं, अपितु इन्सान के गुम होने से। और बातों को छोड़कर, आगे चलकर अधिक निवेदन करूंगा।

—हस्ताक्षर पादरी टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

जो पादरी साहेब ने शिष्टाचार विषय में कहा, सो ठीक है। परन्तु सत्य के कहने में अशिष्टता कभी नहीं हो सकती। अशिष्टता तो झूठ के कहने में होती है। और जो पादरी साहेब ने मुझे द्वैतवादी बताया, सो ठीक नहीं है। मैं अद्वैतवादी हूँ, क्योंकि मैं ईश्वर को एक मानता हूँ। जो पादरी साहेब ने कहा कि बन्दर और गीदड़ आदि के शरीर में ईश्वर के सर्वव्यापक होने से बन्दर और गीदड़ नहीं कहा जा सकता, तो आदमी के शरीर में व्यापक होने से आदमी भी उसे नहीं कहना चाहिये। और कहा कि शरीर में ईश्वर ने अवतार लिया। उसमें दूसरा जीव नहीं था, तो मैं पूछता हूँ कि उसके पहिले ईश्वर था कि नहीं? जो कहें कि था, तो उसका आना जाना असम्भव है। और, जो कहें कि नहीं था, तो उसका सर्वव्यापक होना नहीं हो सकता।

जो मैंने जाहिर होने के विषय में पूछा था, उसका ठीक-ठीक उत्तर पादरी साहब ने नहीं दिया। गोलाकार कर गये। जो ईश्वर दृश्य नहीं, तो उसको जाहिर होना कहना व्यर्थ है। और जो कहें कि दृश्य है, तो सर्वव्यापक नहीं। और जो पादरी साहेब ने कहा कि हमारी कमजोरी के कारण वह अवतार लेता है, तो हमारी कमजोरी के कारण ही क्या वह सर्वव्यापक हमारा पूरा काम नहीं कर सकता? जो कहें कि नहीं कर सकता, तो इसमें क्या युक्ति है? और फिर वह सर्वशक्तिमान् भी नहीं रहता। और जो कहें कि कर सकता है, तो जन्म धारण करना ही व्यर्थ हो जाता है।

और जो कहा कि प्रीति का रखना, सो भी ठीक नहीं है। क्योंकि यहां प्रीति गुण और प्रीति करने वाला चेतन द्रव्य है। इसलिये पादरी साहेब का कहना ठीक नहीं है। परमेश्वर अपने स्वाभाविक गुण के अनुकूल काम करने में लाचार कभी नहीं है। परन्तु अवतार के धारण करने में तो लाचार ही मानना होगा। जैसे कि पादरी साहेब ने कहा कि वह आदमी को नहीं सुधार सकता। अब मैं पूछता हूँ कि सर्वशक्तिमान् का क्या अर्थ है? पादरी साहेब क्या चाहते हैं? जैसे पादरी साहेब ने कहा कि कुछ बातों में लाचार है, वैसे ही अवतार लेने में भी लाचार है। क्योंकि सर्वव्यापक का आना-जाना प्रकट करना सर्वथा असम्भव है। जब वह दुःख नाश नहीं करता, तो पादरी साहेब के कहने से ही पादरी साहेब की बात कट जाती है। जो कि कहते हैं कि अवतार लेकर मनुष्यों का दुःख काटता है। और जो कहा कि दुःख क्यों देता है? इसका उत्तर यह है कि वह न्यायाधीश है। जीवों के जैसे पाप-पुण्य होते हैं, वैसा ही उनका फल देना अवश्य है। क्योंकि वह सच्चा न्यायकारी है।

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी टी० जी० स्काट साहब

द्वैतवादी वे होते हैं, जो कि दो पदार्थ मानते हैं। एक तो ईश्वर और दूसरे, ईश्वर से भिन्न यह कार्य जगत्। अद्वैतवादी वे होते हैं जो कि एक ही पदार्थ ईश्वर को मानते हैं और कुछ नहीं। सो ज्ञात नहीं कि पण्डित जी एक ही पदार्थ मानते हैं, वा दो। ईश्वर अनदेखा तो है, परन्तु जब अपने आपको प्रकट करना चाहता है, तो प्रकट कर देता है। शारीरिक अर्थात् शरीर में तो आत्मा से हम आपके शरीर को देखते हैं, आत्मा को नहीं। परन्तु उस प्रकार से होने से ईश्वर का हाल बहुत अधिक जानते हैं। क्योंकि एक नमूना पवित्र और पूर्ण हमारी दृष्टि में होता है। इसलिये

ईश्वर का अवतार होता है। ईश्वर ने देख लिया है कि मनुष्य के लिये उचित यही है, इसलिये ऐसा ही हुआ और होता है।

ईश्वर सर्वशक्तिमान् तो है, परन्तु तब भी इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई बात उसके वश से बाहर नहीं। वह अधर्माचरण नहीं कर सकता। झूठ नहीं बोल सकता। दो और दो को वह पांच नहीं मान सकता। इससे यह नहीं हो सकता कि एक वस्तु हो भी और न भी हो। अर्थात् एक अर्थ से उसकी शक्ति की भी सीमा है।

मैंने यह कहा कि यदि मनुष्य की इच्छा नहीं है, तो ईश्वर उसे सुधार नहीं सकता। सुधार का सर्वोत्तम उपाय यही है कि देह धारण करे और एक पूर्ण आदर्श मनुष्य के सामने प्रस्तुत करे। मनुष्य तो आदर्श को चाहता ही है। संसार में सर्वश्रेष्ठ और पवित्र गुरु कोई नहीं है, कि जिसने कभी भी पापाचरण न किया हो। कोई गुरु ऐसा नहीं है, जो सब बातों में पूर्ण हो। केवल ईश्वर ही देह धारण करके मनुष्य के सामने ऐसा नमूना पेश कर सकता है। जिससे ठीक-ठीक धर्म का मार्ग प्रत्येक मनुष्य को प्राप्त हो सके और वह हर बात में नेकी और पुण्य को जान सके कौन नहीं जानता कि मनुष्य अनुकरणप्रिय है। नमूने को देखकर उसके अनुसार कार्य करता है। पाठशालाओं और सेनाओं में देखो और घर में भी देखो, जब नमूना अच्छा है, गुरु पूर्ण है, तब उन्नति भी बहुत अच्छी होती है। क्या यह बात उत्तम और रहस्यमयी नहीं है? कि ईश्वर देह धारण करके इन्सान के लिये एक पूर्ण और पर्याप्त नमूना दिखावे कि जिससे मनुष्य अपनी मोक्ष प्राप्ति में समर्थ हो सके।

ईश्वर की इच्छा यूँ है और यही मेरा भी अभिप्राय है कि खुला करके कह देना कोई अच्छी बात नहीं है। उसमें सावधानता होनी ही चाहिये। यदि ईश्वर ने अपनी इच्छा से ऐसा किया, क्योंकि उसको यही उत्तम प्रतीत हुआ, तो फिर हम इसके विरुद्ध क्यों बोलें?

अब शब्द प्रमाण को लीजिये। इंजील में लिखा है—''आरम्भ में शब्द था। और शब्द खुदा के साथ था। और शब्द खुदा था। और शब्द साकार हुआ।'' अर्थात् वही खुदा शरीर धारण करके प्रकट हुआ। यह लिखा है। और जिस किताब में यह लिखा है, ऐसी उत्तम किताब है। और वह अपना प्रमाण कि वह ईश्वर की ओर से है। और जो कुछ कि उसमें लिखा है, वह बुद्धिपूर्वक, तर्क-संगत और प्रमाण युक्त है। और यह

कहा कि बहुत से लोग इसको झूठ समझ कर छोड़ देते हैं, जैसा कि वेद को। क्योंकि वह सर्वथा मिथ्या है और उसके समर्थन में कोई भी युक्ति वा प्रमाण नहीं है। **—हस्ताक्षर पादरी टी० जी० स्काट साहेब**

स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

अद्वैत विशेषण परमेश्वर का है, किसी दूसरे का नहीं। इसके कहने से यह सिद्ध हुआ कि परमेश्वर एक है। जीव अनेक हैं। और जगत् का कारण अनेक प्रकार का है। और जो पादरी साहेब कहें कि ईश्वर के अतिरिक्त दूसरा और कोई न था, तो फिर जीव और यह जगत् कहां से आया? जो कहें कि ईश्वर से, तो जीव ईश्वर हुआ। जो कहें कि कारण से, तो पादरी साहेब को भी कारण मानना पड़ेगा। और यदि जीव की उत्पत्ति मानी जाये, तब तो उसका नाश भी अवश्य ही मानना होगा। यह बात कई वार चली, परन्तु अभी तक ठीक-ठीक उत्तर नहीं दिया गया कि उसको देह धारण करने की आवश्यकता ही क्या है? और इसके विना ही वह अपना काम क्यों नहीं कर सकता? इसका कुछ जवाब नहीं हुआ। जब उसकी शक्ति की सीमा है, तो फिर ईश्वर की भी सीमा क्यों नहीं है? जो कहें ईश्वर की भी सीमा है, तो वह सर्वव्यापक नहीं। और यह बात पादरी साहेब के पहले कथन के भी विरुद्ध होगी। जब परमेश्वर की सब बातों को नहीं जानते तो फिर पादरी साहब ने ऐसा क्यों कहा था कि ईश्वर अवतार लेता है। और वे अब इस बात में जिद क्यों करते हैं? और जब अवतार लेने से पहिले उसे कोई जान ही नहीं सकता, तो उसी ने अवतार लिया यह कहना भी व्यर्थ ही है। क्योंकि वही पुरुष या पादरी साहेब आज भी हैं, जो कल के शास्त्रार्थ में थे। जब कि अवतार होने से पहिले कभी देखा या जाना ही नहीं, तो फिर उसी ने अवतार लिया है, यह कहना भी तो अनुचित है और अयुक्त ही है।

क्या पादरी साहेब ने कभी इस बात पर विचार नहीं किया कि पृथिवी, सूर्य, चन्द्र, मनुष्य शरीर आदि भी तो ईश्वरीय शक्ति के ही नमूने हैं और एक साढ़े तीन हाथ के शरीर में आकर, खा, पी, बढ़ घटकर मर जाना भी क्या कोई बड़ा नमूना है।

और जो इञ्जील के लेख की बात कही कि वह शब्द अवतार हुआ। यह कथन सर्वथा मिथ्या है। क्योंकि शब्द गुण होता है और द्रव्य कभी भी नहीं हो सकता। ऐसी मिथ्या बात जिस इंजील में लिखी है, वह सत्य

कभी नहीं हो सकती। और, न ही कभी उत्तम हो सकती है। पादरी साहेब की इञ्जील में योहन्ना के स्वप्न के प्रकाशित वाक्य की कथा सर्वथा असम्भव है कि जो पोथी के एक बंधने के खोलने पर उसमें से एक सवार घोड़े सहित निकला। क्या ऐसा कभी हो सकता है। ऐसी-ऐसी कई झूठ बातें हैं। क्या पादरी साहेब ने ये कभी भी नहीं देखी होंगी? फिर भी ऐसी किताब के सत्य होने का दावा करते हैं, सो जिद करने के सिवा और कुछ नहीं है।

इसलिये पादरी साहेब और सब सज्जन पुरुषों को चाहिये कि सब सर्वथा सत्य, ईश्वरकृत वेदों की शरण लेकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि अवश्य करें।

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

योहन्ना के विषय में 'मकाशफत की पुस्तक' में लिखा है। उसके विषय में यदि पण्डितजी की बुद्धि ऐसी ही है, तो मैं क्या उत्तर दे सकता हूँ? ईश्वर ने अपनी सामर्थ्य से इस सम्पूर्ण सृष्टि को अभाव से भाव रूप में रचा है। उचित यही है कि वह जब भी चाहे इसका नाश कर दे। जब तक यह सृष्टि स्थिर है, तब तक ईश्वर इसमें सर्वव्यापक नहीं है। वह तो इससे पृथक् है। और मैंने बार-बार यह कहा है कि उसने जो अवतार लिया, इसका कारण था। सो आप फिर से पहले लेख को देख लीजिये।

ईश्वर की शक्ति की सीमा यही है कि वह अपने विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सकता। हम दावा करते हैं कि हम सबके शरीर में भी उसका प्रकाश होता है। और सब कर्मों के लिये उसने एक पूर्ण नमूना भी हमें दिया है। मनुष्य के लिये उसकी महिमा चांद, सूर्य, सितारे से अधिक है।

शब्द का भाव यह है कि वह ईश्वर को प्रकाशित करने वाला हो। जैसे कि शब्द ही मनुष्य के अर्थ को भी प्रकट करता है, उसी प्रकार मसीह जैसे अवतार ईश्वर की महिमा और अर्थ को प्रकट करते हैं।

अब देखिये कि लोग बाइबिल के विषय में कितने पुरुषार्थी और सावधान हैं और इस पुस्तक को कैसी दृढ़ता के साथ पकड़े हुए हैं। पच्चीस सोसाइटियाँ हैं, जो कि इसकी छपाई में संलग्न हैं। दो सौ भाषाओं में इसके अनुवाद हो चुके हैं। उदाहरण के रूप में दो सोसाइटियों के कार्य

को लें। एक वर्ष में इङ्गलिस्तान में एक ने बाईस लाख, छियानवे हजार, एक सौ तीस प्रतियां छपवाईं। और बतलाइये। अमेरिका में एक सोसायटी में सत्तर बड़ी-बड़ी मशीनें छापने के लिये हैं। चार सौ कार्यकर्त्ता हैं। उसमें बीस हजार पाँच सौ प्रतियाँ एक ही दिन में तैयार की जाती हैं। कौन कह सकता है कि इस किताब को नहीं मानते। सो मैंने सिद्ध कर दिया कि ईश्वर की देह धारण करने की पूर्ण सम्भावना है। ऐसा होना बुद्धि से परे की बात नहीं; अपितु यह युक्तिसंगत और उचित है। उसका बहुत आवश्यक कारण भी मैंने बता दिया और इस पुस्तक का वचन सत्य प्रमाणित होता है।

—हस्ताक्षर टी० जी० स्काट साहेब

ता० २७ अगस्त, सन् १८७९ ई०

विषय-ईश्वर पाप को क्षमा भी करता है

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

मेरा दावा नहीं है कि ईश्वर दण्ड नहीं देता। दण्ड भी वह अवश्य ही देता है। परन्तु मेरा निवेदन यह है कि वह समय-समय पर, जब भी और जैसा भी उसको उचित प्रतीत होता है, मनुष्य के कल्याण के लिये पाप क्षमा कर सकता है। जब कोई ईश्वर है, वह सर्वगुण सम्पन्न है और चेतन भी है। और भी उस में अनेक प्रकार के गुण, कर्म और स्वभाव विद्यमान हैं, तो यह भी अवश्य ही समझना चाहिये कि वह हम को देखता है। हमारे लिये चिन्तन करता है। हमारा कल्याण चाहता है। और हमको सुधारना चाहता है। सो यह दावा कोई अनुचित नहीं है।

बहुत-सी बातों में हमारी ईश्वर में समानता है। अर्थात् हम धर्म की बातें जैसे कि न्याय और अन्याय इत्यादि जानते हैं। ईश्वर में अनेक प्रकार की विशेषतायें हैं। जैसा कि न्याय, प्रेम, दया, इत्यादि। सो ये मनुष्य में भी पाई जाती हैं। जब हम इस बात पर विचार करें कि बहुत-सी बातों में हम और ईश्वर एक ही हैं, तब हम ईश्वर की सत्ता को कुछ-कुछ जान सकते हैं। हमें यह भी समझना चाहिये कि ईश्वर के साथ हमारा सम्बन्ध ऐसा है, जैसा कि हम आपस में रखते हैं। अर्थात् ईश्वर हमारा शासक है। वह हम पर शासन करता है। वह हमारा पिता है। उस ने हम को उत्पन्न किया है। वही हमारा पालन और संरक्षण करता है।

जब हम इन बातों पर विचार करते हैं, तब हम ईश्वर के विषय

में अधिकाधिक बोध प्राप्त करते हैं। और वेदों में तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों में भी पिता तथा शासक आदि के रूप में ईश्वर का उल्लेख किया गया है। अब विचारना चाहिये कि जब सभी धर्म-ग्रन्थों में ऐसा उल्लेख है, तो इसमें कुछ न कुछ बात हमारे समझने-समझाने की भी है। हमें यह समझना चाहिये कि जिस प्रकार उसके साथ हमारा शासक वा पिता के रूप में सम्बन्ध है, उसी प्रकार वह पिता और शासक के कर्तव्य कर्मों का पालन भी अवश्य ही करता है। अब विचारिये कि पिता और शासक का काम क्या-क्या होता है? इस में कुछ भी सन्देह नहीं है कि ये दण्ड देने वाले भी होते ही हैं। दण्ड देने का भी एक उत्तम उद्देश्य होता है और वह यह कि दण्ड देकर अपराधी सन्तान वा प्रजा को सुधारा जाये। और इस प्रकार दूसरों को भी शिक्षा मिले। हम और आप यह भी कहते ही हैं कि बदले की भावना से दण्ड न दिया जावे। दण्ड उतना ही दिया जावे, जितना कि आवश्यक हो और शिक्षादायक हो। फिर भी यदि पिता वा शासक चाहें तो क्षमा कर दें। और इसीलिये क्षमा होती है।

—हस्ताक्षर पादरी टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी साहेब का पक्ष यह था कि ईश्वर पापों को क्षमा भी करता है। क्षमा कर सकता है, ऐसा पक्ष नहीं। फिर पादरी साहेब ने दूसरी प्रकार से क्यों कहा? और यह कहा कि दण्ड भी अवश्य देता है। यह तो परस्पर विरोधी कथन है। क्या आधा दण्ड देता है? और आधा क्षमा कर देता है? या कुछ कम-अधिक करता है? जैसे ईश्वर सब बातें जानता है, क्या जीव लोग भी वैसे ही जानते हैं? अथवा कम-अधिक जानते हैं। जैसे हमारे बीच में न्यायाधीश न्यायकारी होता है और अन्यायकारी भी होता है, क्या ईश्वर भी वैसा ही है? अथवा ईश्वर केवल न्यायकारी है? जो न्यायकारी है, तो फिर क्षमा करना कहाँ रहा? क्योंकि न्याय उसका नाम है, जिसने जितना, जैसा काम किया, उसको उतना, वैसा ही फल देना।

जो ईश्वर को थोड़ा बहुत, कुछ न कुछ जानते हैं, तो मैं पूछता हूँ कि ईश्वर की सब बातों में ऐसी ही रीति है, या कुछ कम-अधिक है? यह मैं भी मानता हूँ कि ईश्वर के साथ हमारा राजा और पिता का सा सम्बन्ध है। परन्तु यह सम्बन्ध क्या अन्याय करने के लिये है? ऐसा कभी नहीं हो सकता। वेद आदि पुस्तकों में क्षमा करना कहीं नहीं लिखा है। ईश्वर के न्याय करने का क्या अर्थ है? न्यायाधीश और सभा आदि के दण्ड और पुरस्कार आदि सुधार आदि के लिये होते हैं अथवा इनका कुछ और अर्थ है? और जो क्षमा करता है, तो किस-किस काम पर क्षमा करता है और किस-किस पर नहीं? जब क्षमा करता है, तब तो ईश्वर पाप का बढ़ाने वाला होता है। क्योंकि वह जीवों को पाप करने में उत्साहित करता है। जब ईश्वर सर्वज्ञ है, तो उसके न्याय आदि गुण और कर्म भी भूल और भ्रान्ति आदि सब दोषों से रहित हैं। इसलिये जब ईश्वर अपने स्वभाव के विरुद्ध कोई कार्य कभी कर ही नहीं सकता, तो फिर न्याय के प्रतिकूल क्षमा वह कैसे कर सकता है? और ईश्वर जो दयालु है, तो दया का भी वही अर्थ है, जो कि न्याय का है। क्षमा करना दया नहीं है। जैसे कि एक डाकू पर कोई दया करे अर्थात् क्षमा करे, तो क्या वह दयालु गिना जा सकता है? कभी नहीं। क्योंकि हजारों जीवों को उसने दु:ख दिया है। जब डाकू क्षमा कर दिया जावेगा, तब तो वह बड़े साहस के साथ और भी खूब डाके मारेगा। इसलिये दया का मतलब भी और ही है, जो पादरी साहेब जानते हैं, वह नहीं।

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

पण्डितजी जल्दी न करें। मेरा मतलब बेईमानी पर कमर बांधने का नहीं है। जब ईश्वर क्षमा करता है तो उसमें 'सकता या नहीं सकता' का उल्लेख आरम्भ में इसलिये किया गया है कि इस प्रकार की सम्भावना प्रतीत होती है। नि:सन्देह आज का विषय तो यही है कि वह क्षमा करता है। हम यह नहीं कह सकते कि वह कहां तक दण्ड देता है और कहां तक क्षमा करता है। यह उसका काम है, हमारा नहीं। परन्तु जब वह सर्वज्ञ है और हम लोगों के समान भूल भी कभी नहीं करता। हम लोग तो अपने कामों में भूल किया ही करते हैं। ईश्वर अपनी अच्छी बातों में, और उसकी सभी बातें अच्छी हैं, भूल कभी नहीं करता, ईश्वर तो सब कुछ जानता है। हम वास्तव में कुछ भी नहीं जानते। उसके क्षमा करने में भी अवश्य ही कोई भेद है। क्योंकि क्षमा करना सदा ही एक सूक्ष्म विवेक का कार्य होता है। ईसाई लोग दृढ़तापूर्वक कहा करते हैं कि वह विना किसी सिफारिश के और विना किसी न्याय के क्षमा किया करता है। परन्तु जब वह दयालु है और न्यायकारी भी है, तो वह सर्वथा एक ही बात

है। अर्थात् दया और न्याय एक ही बात है।

परन्तु जरा न्यायकारी बन कर सोचिये। दया में कुछ न कुछ मतलब ऐसा भी जरूर होगा जो कि न्याय में नहीं है। वेद में यह जरूर लिखा है कि ईश्वर पापों को क्षमा करता है।

अब मैं यहां पर एक पुस्तक म्यूर साहेब की कि जिसमें लिखा है—''अदिति पाप को क्षमा करती है,'' का प्रमाण देता हूँ। पण्डितजी कहेंगे कि यह अर्थ गलत है। अब अंग्रेजी जानने वालों का यह काम है कि वे म्यूर साहेब की पुस्तक देख कर न्याय करें। मैं यह पूछना चाहता हूँ कि क्या क्षमा शब्द का विचार वेद वालों को कभी भी नहीं सूझा। क्या वे क्षमा का अर्थ नहीं जानते थे। और, क्या क्षमा करना भूल है?

मैं यह सिद्ध करूंगा कि समय-समय पर क्षमा करना बहुत ही श्रेष्ठ कार्य है। यदि इसे संसार में से हटा दिया जाये, तो संसार की अवस्था बहुत ही बिगड़ जायेगी। और यह तो अनुमान से प्रत्येक व्यक्ति जान सकता है कि क्षमा से संसार में बहुत अच्छे-अच्छे परिणाम होते हैं। कौन जानता है कि माता-पिता के बीच में और बेटा-बेटी के बीच में क्या वास्ता है और परस्पर एक का दूसरे से तथा मित्र का मित्र से क्या संबंध है? यदि इन सबके बीच में क्षमा करने का भाव कभी भी, सर्वथा न आवे तो ये सम्बन्ध जरा भी न चलें।

और यह कहना कि क्षमा करने से पाप बढ़ जाता है, तो यह ठीक है। यदि क्षमा सदा ही क्षमा हो, और वह कभी किसी भी रूप में दण्ड न हो। और यह भी ठीक है कि कुछ अवस्थायें ऐसी भी होती हैं कि जिनमें किसी को कभी भी क्षमा नहीं करना चाहिये जैसा कि डाकुओं के विषय में। संसार में सभी बातें इस प्रकार की नहीं हैं कि हम क्षमा को संसार से सदा के लिये सर्वथा दूर कर दें। जो अनादि और न्यायकारी है, वह यह भी जानता है कि कब और किस पर क्षमा और दया आदि का व्यवहार किस प्रकार करना चाहिये। आगे चल कर मैं यह भी बताऊंगा कि क्षमा करने से पापवासना का अन्त हो जाता है। और साथ ही यह भी कि दण्ड देने से पाप की प्रवृत्ति बढ़ जाती है। और इस प्रकार मनुष्य और भी अधिक निडर तथा बड़ा शैतान बन जाता है।

—हस्ताक्षर पादरी टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

जो शास्त्रार्थ का विषय है और जिसको सिद्ध करने की प्रतिज्ञा प्रथम पादरी साहेब ने की थी, उससे दूसरा कथन करना न्याय-शास्त्र के अनुसार पराजय का सूचक है। इस प्रकार की पराजय को दार्शनिक भाषा में प्रतिज्ञान्तर कहा जाता है। पादरी साहेब ने कहा कि असल विषय वही है कि ईश्वर पापों को क्षमा भी करता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि ऐसे अवसर पर पादरी साहेब को अपना पक्ष सिद्ध करने के लिये विशेष बल देना चाहिये था। जब पूर्ण निश्चय से नहीं जानते, तो फिर उसका प्रतिपादन या समर्थन कैसा? मैं पूछता हूँ कि जितने अंश में क्षमा करना पादरी साहेब मानते हैं, उसको भी ठीक-ठीक जानते हैं वा नहीं? क्या आप के मत में ईश्वर डाकू आदि को क्षमा नहीं करता? आप डाकू आदि को क्षमा करने का उपदेश नहीं करते? और, यदि ईश्वर किसी के वसीले से क्षमा करता है तब तो वह पराधीन ठहरता है। और यह भी बतायें कि ईश्वर किसके वसीले से क्षमा करता है? वह वसीला आपका है, या किसी दूसरे का? यदि कहो कि अपने आप का वसीला है, तो झूठ है। और, यदि कहो कि किसी दूसरे का है, तो फिर ईश्वर स्वतन्त्र नहीं रहा।

और, जो पादरी साहेब ने कहा कि अदिति माता क्षमा करती है, यह वेद में लिखा है। तो मैं पूछता हूँ कि अदिति किसका नाम है? और क्षमा करना तो चारों वेदों में कहीं भी नहीं लिखा। जब क्षमा करना है ही व्यर्थ, तो फिर ऐसी मिथ्या बातों का उपदेश वेदों में क्योंकर हो सकता है?

यह बड़े आश्चर्य की बात है, कि अंग्रेजी जानने वाले वेदों के सिद्धान्तों का निर्णय करें। यह बात तो ऐसी ही है, जैसे कि कोई संस्कृत पढ़कर, अंग्रेजी के सिद्धान्तों का निर्णय करे।

और जो माता-पिता क्षमा करते हैं, ऐसा पादरी साहेब का कथन है, सो वे पूर्णतया क्षमा करते हैं, या कुछ-कुछ। जो कहें कि कुछ-कुछ, तब भी ठीक नहीं है। क्योंकि पाप करने से क्या माता-पिता अपने अन्तरात्मा में अपने सन्तान के प्रति प्रसन्न होते हैं? यदि हाँ तो फिर वे बालकों की ताड़ना क्यों करते हैं? यही तो दण्ड है। जब बालक कुछ समर्थ हो जाते हैं और पाँच वर्ष से बड़े हो जाते हैं, तब माता-पिता बालकों के साधारण पाप वा अपराध भी कभी क्षमा नहीं किया करते। और जो क्षमा करते

हैं, तो कभी -कभी माता-पिता और संतान में वैर विरोध क्यों होता है? इससे पादरी साहेब का दृष्टान्त ग़लत ठहरता है। हाँ, यदि सब माता-पिता क्षमा करते, तब तो पादरी साहेब का दृष्टान्त भी ठीक होता और कथन भी। आप के मत के अनुसार—शैतान ने बहुत से अपराध किये हैं। परन्तु; ईश्वर ने उसको आज तक कोई दण्ड दिया कि नहीं? और भविष्य में भी उसको कोई दण्ड देगा वा नहीं। जब शैतान को बनाया, तब तो वह पवित्र था। फिर जब उसने पाप किया ईश्वर ने उसे क्षमा क्यों नहीं किया? और आगे भी क्षमा करेगा, वा नहीं?

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

हमारे सुयोग्य विद्वान् और प्रिय मित्र स्वामी दयानन्द जी घबरायें नहीं। मैं विषय से बचकर न चलूँगा। परन्तु यह मुझे अधिकार है कि मैं जिस प्रकार भी उचित समझूँ, उसी प्रकार अपनी युक्ति का आधार स्थिर करूँ। पहिले मैं बुद्धि से यह सिद्ध कर रहा हूँ कि क्षमा की सम्भावना है। फिर आगे चलकर देख लेना, मैं शास्त्रीय प्रमाणों से भी यह सिद्ध करूंगा कि ईश्वर पाप क्षमा करता है। अर्थात् आज का विषय कि ईश्वर पाप क्षमा भी करता है, वह बुद्धिपूर्वक है कि नहीं? और फिर इसका विशेष कथन न करूंगा।

मेरी युक्ति तीन प्रकार की है। बुद्धिपूर्वक है, शास्त्र-सिद्ध है और अनुभव से भी पुष्ट है। वह डाकू का उदाहरण इस प्रकार से है कि अनुशासन को स्थिर रखने के लिये डाकू को क्षमा करना अच्छा नहीं है। परन्तु कौन नहीं जानता कि कभी-कभी डाकुओं को क्षमा करने के भी बड़े उत्तम-उत्तम परिणाम निकलते हैं। एक उदाहरण है—

योहन्ना रसूल ने एक आदमी को ईसाई धर्म में दीक्षित किया। वह डाकू था। बाद में वह धर्म से बहिष्कृत किया गया और जंगल में भाग गया तथा बड़े-बड़े डाकुओं का काम करने लगा। योहन्ना उसकी खोज करने जंगल में गया। पहिले तो डाकू ने उसे मार डालना चाहा, परन्तु योहन्ना बूढ़ा था। वह उससे न डरा और पास जाकर बोला कि मैं तो बूढ़ा आदमी हूँ, मुझे क्यों मारते हो? डाकू का हृदय परिवर्तन हो गया। उसने डाकुओं का साथ छोड़ दिया और योहन्ना के साथ चला आया। फिर वही डाकू बहुत उत्साही प्रचारक और साधु पुरुष बन गया। उसने

फिर कभी कोई अपराध नहीं किया और अपना जीवन बहुत पवित्रता से व्यतीत किया। डाकुओं आदि के विषय में जब कि मनुष्य भी क्षमापूर्ण व्यवहार करते ही हैं, तब यह भी सम्भावना है कि ईश्वर भी क्षमा कर देता है और यह पूर्णतया सम्भव है। ईश्वर तो मनोगत बातों को भी जानने वाला है।

ईसाइयों का सिद्धान्त यह है कि यह वसीला, जिस से क्षमा प्राप्त होती है, निष्कलंक अवतार ईसा मसीह का इस संसार में पैदा होना है।

मैं पण्डितजी से पूछता हूँ कि अदिति का क्या अर्थ है? म्यूर साहेब की पुस्तक का जो जिकर मैंने किया है, सो स्वामीजी जल्दी में किसी बात को उलटी न समझें। मैं कोई मूर्ख नहीं हूँ। म्यूर साहेब की पुस्तक अंग्रेजी में, परन्तु उसमें साथ ही संस्कृत श्लोक भी वेद के भरे हुए हैं। अंग्रेजी जानने वाले सज्जन म्यूर साहेब के प्रमाणों और युक्तियों को अंग्रेजी में भी देख सकते हैं और अपनी संस्कृत में भी समझ सकते हैं।

शैतान का जो हाल है, सो हम नहीं जानते। शायद उसको बीस बार क्षमा मिल चुकी है और अब उसे क्षमा मिलने की कोई आशा नहीं है। फिर भी कौन जानता है? हाँ, इतना हम जानते हैं कि आज शैतान का विषय नहीं है। मैं पण्डितजी से यह पूछता हूँ कि क्या क्षमा कभी भी नहीं होनी चाहिये? क्या मनुष्य के हृदय में क्षमा करने वा क्षमा चाहने का कुछ भी विचार कभी नहीं होता? क्या क्षमा शब्द का संसार में कुछ भी काम नहीं है? पण्डितजी इस बात पर विचार करें।

—हस्ताक्षर टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

मैं क्या घबराया हूँ जो आपने कहा कि घबरायें नहीं। जब पहिले कहा कि ईश्वर पापों को माफ भी करता है और अब कहा कि कर सकता है, तो क्या ये दोनों परस्पर विरोधी बातें नहीं हैं और क्या इस प्रकार आप प्रतिज्ञा-हानि नहीं कर रहे? तर्क शास्त्र प्रमाण और अनुभव आप्त पुरुषों का ही सत्य होता है। प्रत्येक जनसाधारण का नहीं। जब डाकू का कहीं-कहीं क्षमा करना अच्छा है, तो आजकल की सरकार को भी चाहिये कि किसी अवसर पर डाकुओं को क्षमा करे।

योहन्ना के क्षमा करने से क्या प्रत्येक अपराध क्षमा के योग्य हुआ?

उसने भयवश, या किसी स्वार्थवश क्षमा किया होगा। तो क्या उसने यह कोई अच्छा काम किया? और जब तक उसने डाका मारना न छोड़ा था, तब तक अपने साथ क्यों न रखा? और जो कहा कि क्षमा करने से लिया तो यह बात सत्य नहीं है। क्योंकि जब उसने डाके का काम छोड़ दिया और अच्छे काम करके, अच्छा आदमी बना, तब साथ रखा। भले और बुरे दोनों प्रकार के कामों का फल ईश्वर यथायोग्य देता है। जब पादरी साहेब का सिद्धान्त यह है कि ईश्वर पापों को क्षमा भी करता है, फिर उसके विरुद्ध पादरी साहेब ने कथन किया कि जब कभी हम क्षमा करते हैं, तो ईश्वर क्षमा नहीं करता। और जब हम क्षमा नहीं करते, तो ईश्वर क्षमा करता है।

पादरी साहेब ने मुझ से अदिति का अर्थ पूछा है। सो पृथिवी, अन्तरिक्ष, माता, पिता और ईश्वर आदि अर्थ हैं। जैसे किसी हल जोतने वाले के सामने वा और विद्या वाले के सामने रत्नों की वा और-और विद्याओं की बात करें, तो क्या वह व्यर्थ नहीं है? जो शैतान का पाप क्षमा न किया जायेगा, तब तो शैतान के विषय में आपका सिद्धान्त अटक गया। क्षमा शब्द किसी और मुहावरे के लिये है। दण्ड तो दिया जाता है, परन्तु समर्थ को जैसा दण्ड दिया जाता है, वैसा असमर्थ को नहीं। जैसे कि पागलों को पागलखाने में भेजा जाता है। यदि ईश्वर ईसा के वसीले से क्षमा करता है, तो क्या वह खुशामदी नहीं है? क्या आप ईश्वर के सामने भी वकील आदि की आवश्यकता समझते हैं? क्या आप उसे सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान् नहीं मानते? और यदि आप ईसा के वसीले से पापों को क्षमा होना मानते हैं, तो ईसा ने जो पाप किये, उनको क्षमा करने का वसीला क्या है?

—हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

अब यहां पर कुछ विचार करना उचित है। क्षमा करना और बात है तथा दिल को पवित्र करना और बात है। इसलिये मनुष्य की क्षमा और ईश्वर की क्षमा में बहुत भेद है। जब मनुष्य तोबा करे और उस नियम पर चले जो कि उसके लिये नियत और विहित है, तब ईश्वर उसको क्षमा कर देता है। और उसके हृदय को भी पवित्र कर देता है। और मेरा भाव यह है कि ईश्वर ने किसी को क्षमा किया और उसके हृदय को भी पवित्र किया, इसकी पूर्ण सम्भावना है, परन्तु फिर भी मनुष्य की स्वतन्त्रता और धर्मशास्त्र के कारण नियम के अनुसार वह क्षमा नहीं होता। यही मेरा अभिप्राय है।

और, क्षमा का लाभ इसमें प्रतीत होता है कि बीसियों विचारवान् युक्ति-तर्क-विशेषज्ञ भली प्रकार जानते हैं कि क्षमा का परिणाम बहुत उत्तम निकलता है। कोई हठ वा दुराग्रहवश इस सिद्धान्त से इनकार करे, तो करे। पण्डितजी का सिद्धान्त यह है कि ईश्वर किसी को भी विना दण्ड दिये छोड़ता नहीं। परन्तु योहन्ना ने इस डाकू को दण्ड नहीं दिलाया, क्षमा कर दिया। और हमारा यह सिद्धान्त है कि ईश्वर जब भी उसे उचित प्रतीत होता है, क्षमा कर देता है। जैसा कि धर्म-शास्त्र में लिखा है।

पण्डितजी ने अदिति के अर्थ परमेश्वर भी लिखे हैं। और म्यूर साहेब का दावा है कि अदिति वेद के प्रमाण से पापों को क्षमा भी कर देती है। यदि शैतान अभी तक माफ नहीं किया गया, तो यह किसी प्रकार भी मेरे दावे के विरुद्ध नहीं है। क्योंकि आज के विषय में एक शब्द ''भी'' मौजूद है और यह ''भी'' अवस्था और परिस्थिति के अनुसार कभी दण्ड और कभी क्षमा इन दोनों को बताता है। पण्डितजी का दावा है कि ईश्वर कभी भी क्षमा नहीं करता, अतः ''क्षमा'' शब्द को ही संसार से हटा दो। इसके प्रतिकूल यदि ईश्वर कभी किसी एक पाप को भी क्षमा करता है, तो केवल उसी से मेरा पक्ष सिद्ध हो जाता है। मेरा पक्ष यह नहीं है कि ईश्वर क्षमा ही करता है; अपितु यह मेरा पक्ष है कि ईश्वर क्षमा भी करता है। इस ''भी'' पर विशेष ध्यान दीजिये।

ईसा के वसीले का विषय आज नहीं है। इसलिये इस विषय में मैं आज कुछ नहीं कहता। हमारे लिये आज यह जान लेना ही बहुत है कि किस वसीले से पाप क्षमा होता है। उदाहरण के लिये देखिये—दवाई से दर्द हट जाता है। हम दवाई के विषय में विशेष कुछ नहीं जानते, परन्तु न जानने से क्या भेद पड़ता है? दर्द तो दूर हो ही जाता है। इसी प्रकार क्षमा होने की भी एक शर्त तो है।

अब शास्त्रीय प्रमाण आरम्भ होता है। इस में मैं अधिक कुछ नहीं लिखता। जो लोग इस विषय में कुछ विशेष जानना चाहें, और प्रमाण पूछें, वे कल की लिखित पर विचार करें, तथा तौरेत में, खरूज की किताब, अध्याय चौंतीस, आयत आठ और गिनती की किताब, अध्याय

चौदह, आयत अट्ठारह को पढ़ें एवं विचार करें।

—हस्ताक्षर पादरी टी० जी० स्काट साहेब

स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी

क्षमा करना, पवित्र होना है वा नहीं? क्या क्षमा करना पवित्र होने के लिये है? जो कहें कि पवित्र होने के लिये, तो ठीक नहीं। क्योंकि क्षमा करने से पाप की निवृत्ति, संसार में देखने में नहीं आती। और जो अशुद्ध होने के लिये क्षमा होना कहा जाये, तब तो क्षमा करना ही सर्वथा व्यर्थ हो जाये। जब हमारे क्षमा करने, और ईश्वर के क्षमा करने में भेद है, तो आपने पहिले क्यों कहा था कि हम भी दयालु हैं और ईश्वर तुल्य हैं। और ईश्वर के सामने क्षमा कराने वाला योहन्ना मौजूद है, तब तो ईश्वर भी खुशामद को पसन्द करने वाला तथा बेसमझ सिद्ध होता है। क्या योहन्ना मनुष्य नहीं था कि जिसने क्षमा किया? क्या योहन्ना कोई राजा था? वह राजा या ईश्वर नहीं था, यह मैं जानता हूँ।

न्याय दण्ड देने से छोड़ता नहीं है और छोड़ता भी है। यह बात परस्पर विरुद्ध है। जो पादरी साहेब ने यहां मनुष्यों के राज के विषय में यह कहा कि कानून की पाबन्दी करनी आवश्यक है, अत: डाकुओं को क्षमा नहीं किया जा सकता, तो मैं पूछता हूँ कि क्या ईश्वर के घर में कानून की पाबन्दी नहीं है? क्या कोई कह सकता है कि ईश्वर सर्वज्ञ नहीं है? यदि नहीं तो फिर योहन्ना के कहने, फुसलाने और खुशामद करने से वह क्षमा करने को राजी क्यों हो गया? ऐसी बातों से तो ईश्वर की सर्वज्ञता नष्ट होती है।

और जो पादरी साहेब ने कहा कि ईश्वर कभी दण्ड देता है और कभी क्षमा भी करता है। यह बात ऐसी ही मिथ्या है, जैसे कि अग्नि कभी गर्म होती है और कभी ठण्डी हो जाती है। और जो यह बात कही कि आज ईसा मसीह का विषय नहीं है। सो आपने ही आज ईसा का विषय बीच में छेड़ा है। क्योंकि आपने कहा कि ईश्वर ईसा के वसीले से पापों को क्षमा करता है। यहां मैं यह पूछता हूँ कि ईसा जीव था या ईश्वर? जो कहें कि जीव था, तो सभी आदमी जीव हैं। सभी ईश्वर के सामने क्षमा कराने वाले हुए। फिर आप एकमात्र ईसा का नाम ही क्यों लेते हैं? और जो कहो कि ईसा ईश्वर था, तो अपने आप ही वह वसीला अथवा

साक्षी कभी नहीं बन सकता। जो कहें कि उसमें जीवात्मा और परमात्मा दोनों थे, तो दोनों के क्या-क्या काम थे? और दोनों साथ-साथ थे या पृथक्-पृथक्?

जो कहें कि पृथक् थे, तो व्याप्य-व्यापकता न रही। जो कहें कि व्याप्य-व्यापकता है, तो ईसा में और इन सब जीवों में क्या भेद है? जो कहें कि विद्या पढ़े थे। सो भी ठीक नहीं। क्योंकि इंजील के लेख से मालूम होता है कि वह विद्वान् नहीं था। परन्तु एक साधु पुरुष था।

जो लोग ईसा को मानते हैं, उनके सिद्धान्तानुसार जब यहूदियों ने ईसा को फांसी पर चढ़ाया, तो उसने ईश्वर से प्रार्थना की कि—हे ईश्वर! तूने मुझे क्यों छोड़ दिया? ऐसी बातों से उसमें केवल साधारण जीव ही गति करता था, ईश्वर नहीं। किन्तु ईश्वर तो जैसे सब में व्यापक है वैसे ही उस में था। जो कहें कि उसने मुरदों को जीवित किया, अन्धों को आँखें दीं और कोढ़ियों को चंगा किया, भूत निकाले, इसलिये वह ईश्वर था। यहां मैं कहता हूं कि ये बातें प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों और सृष्टिक्रम आदि से विरुद्ध होने से विद्वानों के मानने योग्य न कभी थी, न हैं और न कभी होंगी। हां, ये बातें पौराणिकों के अनुसार हैं।

पक्षी बोला, पशु हाथी आदि आदम की बोली में बोले। जैसा कि तौरेत में लिखा है कि गदहे आदमी की बोली बोले। क्या इन बातों को कोई विद्वान् कभी मान सकता है? अथवा किसी विद्वान् से इन बातों को मनवा सकता है?

और जो यह कहा कि दवा खाने से रोग छूट जाते हैं, वैसा ही वह पापों को क्षमा करना भी है। तो क्या दवा का नियम से सेवन करना, परहेज करना, वैद्य के कहने के अनुसार चलना, अपनी मर्जी से न चलना, यह सब दण्ड नहीं है?

अब तीन दिन से मुझ से और पादरी साहेब से जो वार्तालाप हुआ है, उसके विषय में मैं अपनी बुद्धि के अनुसार यह समझता हूँ कि मैंने पुनर्जन्म का सिद्धान्त सिद्ध कर दिया। पादरी साहेब उसका खण्डन नहीं कर सके। और पादरी साहेब अपने सिद्धान्तों के मण्डन करने में तथा उसके विषय में मेरे प्रश्नों के युक्ति और प्रमाण से उत्तर देने में भी समर्थ नहीं हुए।

—हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वतीजी

पादरी टी० जी० स्काट साहेब

अब विचार करने वाले भाई विचार करें। क्योंकि इस लिखाई के बीच में शास्त्रार्थ के नियमों के विरुद्ध बहुत सी बातें कही गई हैं और वे लिखी नहीं गईं। इसका परिणाम वही हुआ है कि जिसके ऊपर झगड़ा हुआ। अर्थात् केवल अर्थ मिलाने के लिये मैं एक वाक्य सुनाना चाहता था। परन्तु मैंने यह आवश्यक न समझा कि लिखने वाले से उसे लिखने के लिये भी कहूँ। अब मैं केवल उस प्रमाण का ही उल्लेख करता हूँ। भाषा के शब्दों का विचार मैं न करूँगा। जो चाहें वे पुस्तक में उस स्थल को निकाल कर देख लें। हां, यह मैं लिखवा दूंगा कि मैं प्रमाण किस उद्देश्य से देता हूँ। पण्डित जी का यह कहना कि मेरी दलील पक्की नहीं है, और मैंने यूँ सिद्ध किया है, इत्यादि। इसमें कुछ भी सार नहीं है। मैं भी इस प्रकार कह सकता हूँ। अब यह सुनने वालों का काम है कि वे विचार करके, स्वयमेव निर्णय करें। और यह भी स्मरण रखना चाहिये कि मैं यह नहीं चाहता कि इस विषय में किसी प्रकार का पक्षपात किया जाये।

पण्डितजी ने इस बात का कुछ भी उत्तर नहीं दिया कि "क्षमा" शब्द को संसार से बहिष्कृत क्यों नहीं कर दिया जाता। यह एक व्यर्थ और हानिकारक शब्द है। इससे सदा सबकी हानि ही होती है। यदि पण्डितजी के कथनानुसार यही बात है, तो बहिष्कार जरूरी है। मैं तो निःसन्देह यह कहता हूँ कि क्षमा करने से भगवान् की महिमा का प्रकाश होता है। ईश्वर की बड़ाई इसी में है कि वह मनुष्य को क्षमा करे। क्योंकि मैंने कहा कि वह सब गुप्त भेदों को भी यथावत् जानता है। और क्षमा करने के देश, काल तथा पात्र को भी भली प्रकार जानता है। और क्षमा करने के कारणों को भी पूर्णतया जानता है। ईश्वर के घर में न तो कुछ कमी है और न ही किसी प्रकार की भूल वा भ्रान्ति की कोई सम्भावना है। ये कमियां और त्रुटियां इस संसार में ही हैं।

देखो, संसार में कितना पाप, अन्याय, घमण्ड और रक्तपात तथा और भी अनेकविध अनाचार दृष्टिगोचर हो रहा है। पण्डित जी इसे स्वीकार नहीं करेंगे; परन्तु प्रत्यक्ष ही संसार में भारी कमी और त्रुटि देखने में आ रही है। जैसा कि अंग्रेजी सरकार ने इसका यथोचित प्रबन्ध किया है, ईश्वर भी इसका प्रबन्ध करेगा।

मैं निःसन्देह मसीह के विषय में कोई वार्ता न चलाऊंगा। मैं केवल यह कहना चाहता हूँ कि इस पवित्र धर्म-ग्रन्थ में जिस को क्षमा करने का उल्लेख है, वह उसी वसीले से है। यह दर्द का जिक्र तो है, परन्तु दर्द का विवरण यह नहीं है कि कहां-कहां, कैसे-कैसे है? जब कभी इस विषय पर वार्ता चलेगी; तब आप इसे यथार्थ रूप में देख लेंगे। युक्ति और प्रमाण के आधार पर मेरा निवेदन यही है कि क्षमा होती है।

और तोबा के सिद्धान्त से भी यही प्रमाणित होता है कि क्षमा होती है। उपाय को खूब जानना और ईश्वरीय पुस्तक के विषय में इस प्रकार से हंसी-ठट्ठा करना यदि पण्डितजी को उचित प्रतीत होता है और वे प्रत्येक बात को उलटे रूप में ही समझना चाहते हैं, तो वे जानें। वेद की अनेकानेक बातें हैं; परन्तु यहां उनके विषय में मैं विशेष कुछ कहना नहीं चाहता। अब आप मेरे इन उत्तरों को कृपया देख लीजिये—

गिनती की पुस्तक अध्याय १४ आयत १८ का अर्थ इस प्रकार है कि ईश्वर पापों को क्षमा करता है।

लूका की इंजील अध्याय ९, आयत ४ तथा अध्याय १५ और आयत १०, इसी प्रकार योहन्ना का पहिला पत्र अध्याय १ आयत ९ इन का अर्थ यह है कि पापों को क्षमा किया जाता है। फिर मसीह ने अपने चेलों को समझाया कि अपनी प्रार्थना में इस प्रकार से बोलो—"हे ईश्वर हमारे पापों को क्षमा कर।"

अब अनुभवसिद्ध प्रमाणों पर भी विचार कीजिये। अनुभव के आधार पर सत्य को जानना बहुत बड़ी बात है और अपना अनुभव सत्यासत्य का निर्णय करने की सब से बड़ी कसौटी है। मनुष्य कह सकता है कि मेरा पाप क्षमा किया जाये। और इसके साथ ही ऐसा कथन निराधार है। क्योंकि जैसे पंडित जी ने स्वयं भी एक उदाहरण में बताया कि प्रत्येक पापी को दण्ड अवश्य ही मिलेगा। वह पाप भी है। फिर जब तोबा-तोबा कहा, तब भी वही पाप मौजूद है। फिर खुदा के बेटे का नाम लिया, तब भी पाप वर्तमान है। मैं यह मान लेता हूँ कि मनुष्य मिथ्या-कथन करे।

कल्पना करो कि वे सच्ची तोबा करके सन्मार्ग पर आ जावेंगे और प्रत्यक्ष देख भी लेवें कि अब वह पहिले जैसी बात नहीं है। अब मन में सन्तोष है और शांति है। प्रकाश ही प्रकाश है। न कोई सन्देह है, न चिन्ता

है और न ही कोई आशंका है। अब देख लीजिये कि ऐसे हजारों आदमी संसार में हैं कि जिनका यही अनुभव है। और उन्होंने अपने अनुभव से यह भली प्रकार जान लिया है कि ईश्वर ने मेरे पापों को क्षमा कर दिया है। वे अब पूर्णतया सन्तुष्ट हैं। उनके हृदय पर न तो पाप की छाप शेष है और न ही पाप का कोई भार है। पापाचरण की किसी प्रकार की इच्छा वा कल्पना भी नहीं है। एक क्षणमात्र में हृदय परिवर्तन हो गया है।

मेरी ओर से इंजील के अनुसार प्रमाण मिल चुका है। यह कहना बहुत ही आसान है कि यह मिथ्या है। ऐसा है, और ऐसा नहीं। परन्तु जानने वाले जानते हैं। जिसका दर्द सर्वथा चला गया है, वह जानता है, परन्तु मेरे धर्म के मानने वाले इकतालीस करोड़ ईसाई संसार में हैं। उनमें से बहुत से तो झूठे ही हैं, यह मैं स्वीकार करता हूँ, उनका कथन भी झूठ ही है। परन्तु सच्चे आदमी भी बहुत हैं और उनका कथन भी पूर्णतया यथार्थ है, सत्य है। उनकी जीवनचर्या से यह भली भांति प्रमाणित हो जाता है कि उनके सब पाप सर्वथा लुप्त हो चुके हैं। उनके पापों को क्षमा किया गया है। हां, इसको जानने और समझने के लिये अपना अनुभव होना भी आवश्यक है। यह कार्य अभ्यास से होगा।

मैं फिर कहता हूँ कि वह अपने अनुभव का प्रमाण, सब से बढ़कर और पक्का प्रमाण है। युक्ति और तर्क की पुष्टि से भी बढ़कर यह पुष्टि है कि जिसको अपने अनुभव के आधार पर अपना अन्तरात्मा भी पुष्ट करता है। बात यह नहीं है कि हम केवल मौखिक कथनमात्र ही करते हैं, ऐसा कथन तो मिथ्या भी हो सकता है परन्तु जिसके पाप तोबा करने के बाद अपना अस्तित्व सर्वथा खो चुके हैं, वह नहीं जानता कि जैसे कि कोई पिता अपने पुत्र से क्षमा का वचन कहे, तो क्या वह पुत्र यह नहीं समझता कि पिता ने उसे क्षमा कर दिया है, और अब चिन्ताओं की कोई आवश्यकता नहीं है। मानव-हृदय की भी इसी प्रकार अवस्था है।

मैंने तर्क युक्तियों और शास्त्रीय प्रमाणों के द्वारा तथा मनुष्यों के अपने प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर, यह सिद्ध कर दिया है कि ईश्वर पापों को क्षमा करता है।

—हस्ताक्षर पादरी टी० जी० स्काट साहेब